सरदार पटेल
अन्य आयाम

सरदार पटेल

अन्य आयाम

अनुवाद : **महेंद्र नारायण सिंह यादव**

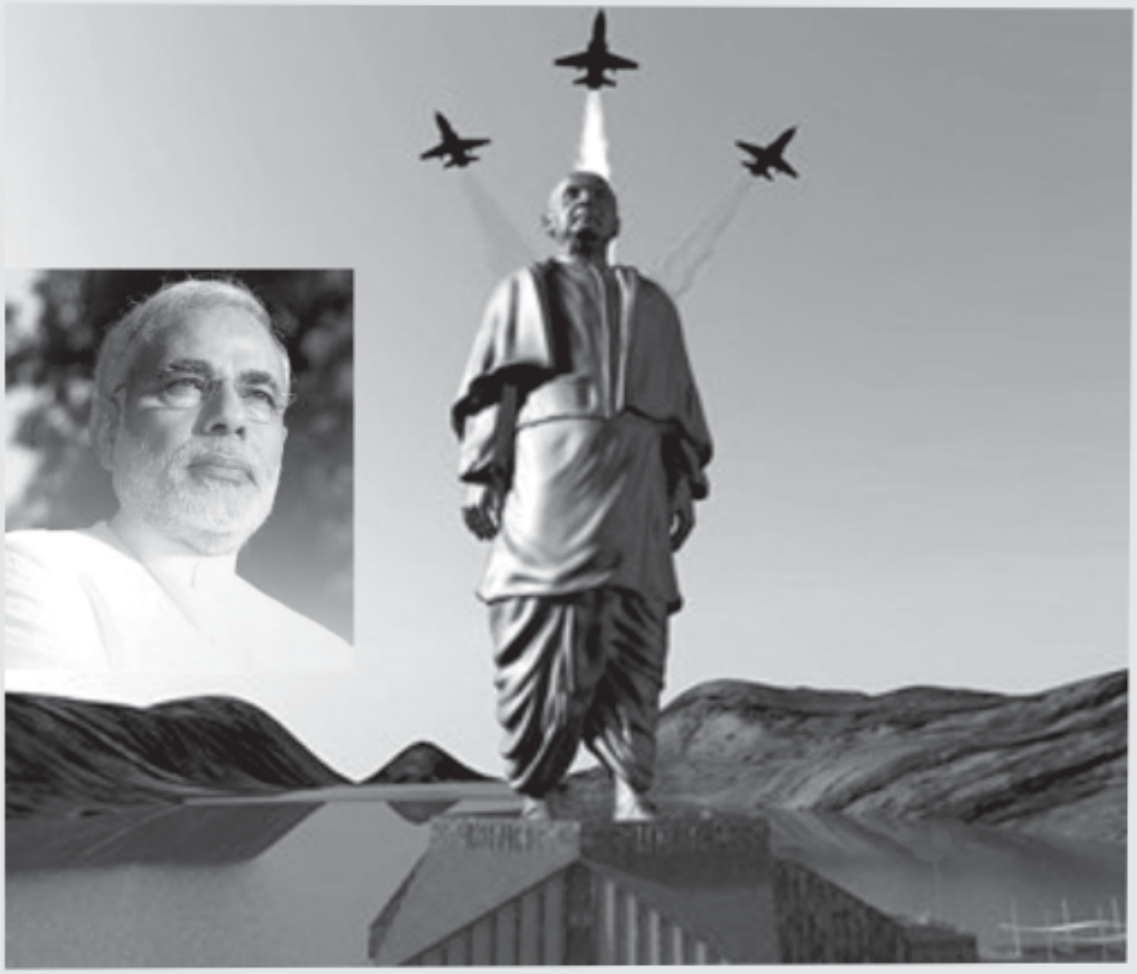

"एकता का प्रतीक किसी एक व्यक्ति की भक्ति नहीं है, परंतु यह चिंतन की भक्ति है। सरदार पटेल का एकता का संदेश देश के प्रत्येग भाग में गूँजता रहना चाहिए और एकता का प्रतीक पूरे भारत में यह संदेश पहुँचाएगा।"

–श्री नरेंद्र मोदी

Sardar Patel: The Iron Man

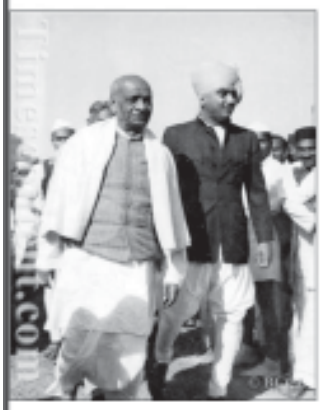

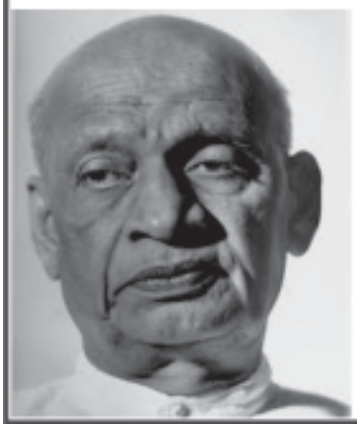

प्रस्तावना

सरदार पटेल और राष्ट्रसेवा की उनकी महान् विरासत सालों से कांग्रेस वंशवाद और सनसनी फैलाने की प्रवृत्ति के साथ छिपाए रही। डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने एक बार देश की एकता के निर्माता के तौर पर सरदार के महान् योगदान के प्रति आभार की इस कमी के बारे में हृदयस्पर्शी ढंग से लिखा था। प्रसाद ने लिखा था, ''आज भारत को इस बारे में सोचना और बात करनी चाहिए था कि वह सरदार पटेल की शासन-कला और दृढ़ प्रशासन की बहुत ऋणी है। तथापि हम अब भी उनकी अनदेखी करते हैं।''

सरदार पटेल के एक प्रमुख जीवनीकार ने इस उपेक्षा और विषमता के बारे में कहा है, ''सन् 1989 में जवाहरलाल नेहरू की जन्म शताब्दी पर हजारों विज्ञापन, टी.वी. सीरियल, समारोह और अनेक कार्यक्रम दिखाई दिए। इसके विपरीत, आपातकाल की घोषणा के चार माह बाद 31 अक्तूबर, 1975 की बात करें, तो पटेल की जन्म शताब्दी की सरकारी विभागों और अन्य संस्थाओं ने पूरी तरह से अनदेखी की।''[1]

हमारी राष्ट्रीय एकता के प्रतीक के रूप में सरदार पटेल को प्रोजेक्ट किया जाना लंबे समय से बाकी है। उनकी स्वघोषित उत्तराधिकारी कांग्रेस पार्टी और उसके नेता जवाहरलाल नेहरू के समय से ही सरदार के प्रति इस तरह का सम्मान और प्रतिष्ठा देने में असफल रहे, इसलिए अब यह दायित्व उन लोगों का है, जो भारत की पवित्र भूमि की प्रकृति तथा भावना से जुड़े हैं, और इस समय ऐसी जागरूकता पैदा करने में जुटे हैं जबकि राष्ट्रीय जीवन के सामने विभिन्न चुनौतियाँ खड़ी हैं।

डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी रिसर्च फाउंडेशन (SPMRF) द्वारा प्रस्तुत इस विशेष लेख में सरदार पटेल के भाषणों के अंश, पत्र, उनके साथ काम कर चुके और उन्हें काम करते देख चुके लोगों के संस्मरण शामिल हैं। यह उन कुछ महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों और मुद्दों को प्रकाश में लाने का प्रयास है जिन पर सरदार पटेल के विचार जवाहरलाल नेहरू के दृष्टिकोण और व्याख्या से पूरी तरह अलग थे। इसमें वे आयाम सामने लाए गए हैं जिन पर कांग्रेस पार्टी ने आज तक न तो चर्चा की, न बहस की और न उन्हें प्रोत्साहित किया। कांग्रेस पार्टी ने कभी प्रभावशाली ढंग से इस बात का उत्तर नहीं दिया कि सरदार पटेल की विरासत के दावेदार होने के नाते वह इस विशेष लेख में उल्लेखित किए गए विभिन्न मुद्दों के आधारभूत दृष्टिकोण से असहमत है या वह उनके दृष्टिकोण और रवैए से सहमत है जो नेहरू और उनके राजनीतिक उत्तराधिकारियों के दृष्टिकोण से अधिकतर भिन्न है।

जहाँ नेहरू सोमनाथ मंदिर के जीर्णोद्धार को हिंदू पुनरुत्थान कहते थे, वहीं सरदार इसे हिंदू भावनाओं के प्रति वचनबद्धता मानते थे और इसे स्वतंत्रता के भाव से जोड़कर देखते थे। जहाँ सरदार सीमा संबंधी अधोसंरचना को तेजी से विकसित करना चाहते थे और अपने अल्प कार्यकाल में उसके लिए हरसंभव प्रयास भी किया, वहाँ नेहरू इस बारे में कुछ करने में असफल रहे और उसके लिए हम भारी कीमत अदा करते आ रहे हैं। जहाँ सरदार महसूस करते थे, कश्मीर मुद्दे पर हमें संयुक्त राष्ट्र में नहीं जाना चाहिए था, वहीं नेहरू ने ऐसा किया और ऐसा करके हमें ऐसे जाल में उलझा दिया जिससे हम आज तक मुक्त नहीं हो पाए। चीन और तिब्बत पर भी पटेल की अंतर्दृष्टि की अनदेखी करने से हम रणनीतिक दिशा और गहराई खो बैठे।

सरदार अल्पसंख्यकवाद से घृणा करते थे और सबके साथ समान व्यवहार करना चाहते थे, लेकिन कांग्रेस ने वोटबैंक की राजनीति को चलाते रहने के लिए इस प्रवृत्ति को मिटानेवाले सारे आह्वानों और प्रयासों को मजबूती से नकार दिया। विडंबना ही है कि अतीत में सरदार पटेल की कड़ी आलोचना करनेवाले कम्यूनिस्ट और कम्यूनिस्ट पार्टियाँ अचानक उनकी विरासत की फिर से परख करने

के लिए मुखर हो गईं; इस प्रकार हमने उनके अतीत के कार्यों और उनकी राजनीति के बारे में सरदार के विचारों की याद दिलाने के लिए एक खंड को शामिल करना जरूरी समझा।

अंत में इस विशेष शोध प्रबंध का उद्देश्य सरदार पटेल की विरासत पर बहस शुरू करना है। हमें उम्मीद है कि इसे पढ़ने से यह अच्छी तरह से स्पष्ट हो जाएगा कि सरदार की विरासत के स्वयंभू दावेदार सालों से किस तरह से असफल रहे हैं और वास्तव में कौन उनका राजनीतिक उत्तराधिकारी है। यह सरदार पटेल के बेहद प्रिय भारत के हित में है कि इस बारे में स्थिति हमेशा के लिए स्पष्ट हो जाए।

हम इस कार्य में उदार सहयोग के लिए श्री श्याम जाजू, राष्ट्रीय सचिव, भाजपा एवं न्यासी, SPMRF और श्री अरुण सिंह, सचिव SPMRF के आभारी हैं।

अनिर्बान गांगुली
निदेशक, SPMRF

भारत का निष्ठावान सैनिक बने रहने की मेरी इच्छा

''...मैं सिर्फ यह जानता हूँ कि मेरी इच्छा भारत का निष्ठावान सैनिक बने रहने की है। अगर मैं अपनी इस निष्ठा से एक कदम भी डिगूँ तो ईश्वर मेरे जीवन का अंत कर दे। किसी मनुष्य के जीवन का आकलन उसके मरने के बाद ही किया जा सकता है, और बहुत कम लोग इस स्तर पर पहुँच पाते हैं, जहाँ वे इस बात के लिए आश्वस्त हों कि उन्होंने अपने जीवन के आखिरी दिनों तक कोई गलती नहीं की। हम अपने जीवन में जो कुछ भी हासिल करने में सक्षम होते हैं, उसके बारे में अधिक बखान नहीं करना चाहिए। मनुष्य दैवत्व के हाथों का खिलौना है। हर जाग्रत मनुष्य का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह गलतियों से बचने के लिए प्रार्थना और काम करे। इस प्रकार, देखो, कि तुमसे ऐसा कुछ न हो जाए जिससे देश के नाम पर कोई धब्बा लगे। अपने हर कार्य के लिए भारत को श्रेय दो। दुनिया को दिखा दो कि स्वतंत्रता के साथ ही भारत के युवा बदल चुके हैं और भारत की प्राचीन संस्कृति के उत्तराधिकारी हैं।''[2]

सरदार पटेल के बारे में श्री अरविंदो

''...उन सारे लोगों में पटेल ही एकमात्र सुदृढ़ मनुष्य है।''
(22 दिसंबर, 1946)[3]

सरदार पटेल के भुलाए जाने के बारे में डॉ. राजेंद्र प्रसाद

''महात्मा गांधी को गुजरे 11 वर्ष से कुछ अधिक समय हुआ है और सरदार वल्लभभाई पटेल को गुजरे 9 वर्ष से कम समय हुआ है। दोनों के प्रति बहुत बड़ी संख्या में लोगों के दिलों में सर्वोच्च सम्मान था, जिनमें साधारण लोग भी थे और बुद्धिजीवी भी। इसके बावजूद इस अल्पावधि में हमने कई मामलों में महात्मा गांधी के सबक भुला दिए और सरदार पटेल को तो तकरीबन पूरी तरह से भुला दिया।...सरदार पटेल कोई विचारवादी या सिद्धांतकार नहीं थे। वे सबसे ऊपर एक व्यावहारिक राजनेता तथा सफल प्रशासक थे। इन क्षेत्रों में उन्होंने इतिहास में अपनी छाप छोड़ी जिसे हमें नहीं भुलाना चाहिए, हालाँकि अब भी हम उनकी ओर उपेक्षापूर्ण रवैया रखते हैं। जरा कल्पना कीजिए, स्वतंत्रता प्राप्ति के समय हम किस तरह से सबसे कठिन और संकटपूर्ण स्थिति में फँसा दिए गए थे, हर आकार और स्वरूप की तथा विकास और प्रगति के विभिन्न स्तरोंवाली करीब 600 रियासतें थीं, और हरेक भारत या पाकिस्तान में शामिल होने अथवा स्वाधीन के लिए स्वतंत्र थी। कश्मीर की समस्या के बारे में सोचिए, जो स्वतंत्रता के 12 वर्षों बाद भी अनसुलझी है। जरा सोचिए, अगर बड़ौदा, जोधपुर, इंदौर और हैदराबाद की समस्याएँ भी अनसुलझी होतीं, तो क्या होता। और तब आपको भारत की सारी रियासतों के विलय का महत्त्व समझ में आता...

''आज जिस भारत के बारे में बात की जाती है और सोचा जाता है, वह अधिकतर सरदार पटेल की शासन कला और दृढ़ प्रशासन की देन है, जिन्होंने राजाओं की सहमति से न केवल सारी रियासतें खत्म करवाईं बल्कि उनके अंदर देशभक्ति का भाव इस हद तक पैदा किया कि व उनके कार्य के लिए उनके आभारी हो गए। तथापि हम उनकी अनदेखी कर रहे हैं। दिल्ली में स्मारक बनाने तक का प्रयास नहीं किया गया। यहाँ तक कि संसद् भवन में लगा चित्र भी एक रियासत (ग्वालियर) की भेंट है। ऐसे में, हमें यह नहीं मान लेना चाहिए कि उनके विचार कुछ कम मूल्यवान थे क्योंकि हमने उन्हें मान्यता नहीं दी।'' (13 मई, 1959)[4]

अनुक्रम

	प्रस्तावना	*7*
	भारत का निष्ठावान सैनिक बने रहने की मेरी इच्छा	*9*
1.	सरदार पटेल को डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी की श्रद्धांजलि	13
2.	संस्मरण	14
3.	सोमनाथ का जीर्णोद्धार : सरदार की वचनबद्धता	15
4.	सरदार पटेल, साम्यवाद और भारत के साम्यवादी दल	18
5.	सरदार पटेल और भारतीय मुसलिम	22
6.	सरदार पटेल के फँसे हुए हिंदुओं के बारे में बयान	26
7.	सरदार पटेल की चीन-तिब्बत सीमा पर अंतर्दृष्टि	28
8.	सरदार पटेल और हैदराबाद की काररवाई	33
9.	सरदार पटेल, पाकिस्तान तथा जम्मू और कश्मीर	36
10.	सरदार पटेल और जवाहरलाल नेहरू स्वभाव और रवैए में अंतर	39
	संदर्भ	*44*

1

सरदार पटेल को डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी की श्रद्धांजलि

अद्वितीय नेता और राजनीतिज्ञ

''भारतीय स्वतंत्रता के वे सर्वाधिक बहादुर, चैंपियन तथा हमारे राष्ट्रीय जीवन में एकता लानेवाली सबसे मजबूत शक्ति रहे हैं। उनमें आदर्शवाद और यथार्थवाद का, शक्ति और उदारता का दुर्लभ मिश्रण मिलता था, जिसने उन्हें एक ऐसा नेता और राजनीतिज्ञ बनाया जिसके समान और कोई नहीं था।''[5]

भारतीय स्वतंत्रता के महान् शिल्पकार

''...जब ब्रिटिश गए तो व दो भयानक काम कर गए। एक तो देश का विभाजन, और दूसरा, तकरीबन एक तिहाई भारतीय क्षेत्र में फैला करीब 500 रियासतों को मुक्त करना। किसी देश के सामने ऐसी स्थिति नहीं आई, जैसी हमारे सामने सन् 1947 में आई थी। व्यावहारिक रूप से यह अराजकता की स्थिति थी। विभाजन के कारण विभिन्न शक्तियाँ सक्रिय हो गई थीं,...लेकिन इस दूसरे काम के कारण अचानक केंद्रीय सत्ता हटने से और देश भर में 500 संप्रभु रियासतें स्वतंत्र हो जाने से ऐसी स्थिति बन गई थी जिसमें किसी को नहीं सूझ रहा था कि कैसे आगे बढ़ा जाए। और यहीं पर स्वाभाविक रूप से नाम याद आता है, भारत की स्वतंत्रता के महान् शिल्पी सरदार वल्लभभाई पटेल का। अपनी शासन नीति के दम पर वे निर्भीक, व्यावहारिक, नम्र और साहसी थे, जहाँ जैसी जरूरत होती, वहाँ वे उसके हिसाब से काम करते। उन्होंने 15 अगस्त, 1947 को 497 रियासतों को स्वतंत्र भारत में विलय के लिए तैयार करने में सफलता हासिल की।''[6]

[नोट: प्रथम केंद्रीय मंत्रिमंडल के बारे में राजमोहन गांधी लिखते हैं—''अंबेडकर और मुकर्जी के राजनीतिक रूप से महत्त्वपूर्ण चयन में पटेल की भूमिका निस्संदेह निर्णायक रही। हिंदू महासभा के मुकर्जी ने मार्च 1947 में बंगाल के विभाजन की माँग करके और अप्रैल तथा मई [1947] में शरद बोस और [एच.एस.] सुहरावर्दी की एकीकृत और स्वतंत्र बंगाल की माँग का समर्थन करने से इनकार करके सरदार का समर्थन हासिल कर लिया था।''[7]

□

2

संस्मरण

सरदार धमकी या ब्लैकमेल के जाल में फँसने वाले नहीं थे

''सरदार ने पार्टी और सरकार के मामलों में कई अलोकप्रिय निर्णय लिए, लेकिन उनके निर्णय स्वीकार किए गए क्योंकि उनमें उनका कोई स्वार्थ नहीं था। वे धमकी या ब्लैकमेल के जाल में फँसनेवाले नहीं थे। उनकी स्वयं की कोई संपत्ति नहीं थी और हर तरह के दिखावे से वे परे थे। उनके पास खोने को कुछ नहीं था, न कोई महत्त्वाकांक्षा थी और न ही पद की कोई लालसा।''[8]

कांग्रेस और सरकारी स्तर पर नकारात्मक प्रचार

''30 जनवरी [1948] को दोपहर बाद गांधीजी, नेहरू और सरदार पटेल, तीनों सहमत हुए कि साथ बैठकर अपने मतभेद सुलझाए जाएँ। हालाँकि, यह बैठक कभी नहीं हो सकी। सरदार कुछ कांग्रेसियों और सरकार द्वारा अपने विरुद्ध चलाए जा रहे नकारात्मक प्रचार से बहुत नाराज थे। उन्हें इस बात की चिंता थी कि गांधीजी को उनका इस नकारात्मक प्रचार से बचाव करना पड़ता था।''[9]

सरदार के पैर जमीन पर थे, जबकि नेहरू हवा में उड़ते थे

''गांधीजी की हत्या के दिन शाम 4 से 5 के बीच, जब सरदार ने बापू से बात की, तो सिर्फ मैं अकेला ही वहाँ उपस्थित था। बापू ने उसके बाद सरदार को मंत्रालय से हटाने का निश्चय किया था, लेकिन माउंटबेटन ने इसका कड़ा विरोध किया, क्योंकि वे मानते थे कि सरदार के पैर जमीन पर रहते हैं, जबकि नेहरू हवा में उड़ते थे। उन्होंने गांधीजी को बताया कि वे सरदार को नहीं हटा सकते। गांधीजी मान गए और उन्होंने अपने निर्णय वापस ले लिया।''[10]

एक सच्चे राष्ट्रीय नेता

हालाँकि पार्टी के ताकतवर नेता थे, लेकिन देश के व्यापक हित में वे न केवल झुक सकते थे, बल्कि राष्ट्रीय जीवन में अन्य तत्त्वों का सहयोग भी हासिल कर सकते थे। एक विशिष्ट उदाहरण तब मिलता है, जब उन्होंने स्वतंत्रता के बाद पंडित नेहरू को सरकार बनाने की सलाह दी, जिसका न केवल सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय स्वरूप हो, बल्कि कांग्रेस के आजीवन विरोधी रहे डॉ. बी.आर. अंबेडकर और डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी जैसे नेताओं का समर्थन लेने पर भी उन्हें कभी कोई खेद नहीं रहा। उनके उदारमन का एक सबसे बड़ा सबूत तब भी मिला, जब दलीय राजनीति से ऊपर उठकर उन्होंने देशहित में ऐसी नीतियाँ लागू कीं, जिनका अर्थ पार्टी की प्रतिबद्धता को हलका करना था। मुझे उनके समकालीन नेताओं में से या बाद में ऊँचाई पर पहुँचे किसी नेता में से ऐसा नहीं मिला, जो अपने विरोधियों पर भी इतनी गहरी छाप छोड़ता हो।[11]

□

3

सोमनाथ का जीर्णोद्धार : सरदार की वचनबद्धता

सरदार पटेल : हिंदू जनता के सम्मान के प्रतीक स्थल की जीर्णोद्धार

''इस मंदिर के प्रति हिंदू भावनाएँ बहुत मजबूत और व्यापक हैं। वर्तमान परिस्थितियों में, यह संभव नहीं है कि मात्र मंदिर के जीर्णोद्धार या उसके विस्तार से ही ये भावनाएँ संतुष्ट हो जाएँगी। मंदिर का जीर्णोद्धार हिंदू जनता के सम्मान और भावनाओं का प्रतीक होगा।''[12]

सरदार पटेल ने सोमनाथ के लिए खुद धन जुटाया

प्रिय श्री ननजीभाई,

मणिबेन ने 17 तारीख का आपका लिखा पत्र मुझे दिखाया। मैं आपका शुक्रगुजार हूँ कि आपने सोमनाथ के जीर्णोद्धार की मेरी वचनबद्धता को पूरा करने के लिए मेरे जन्मदिन पर 73,100 रुपए का चंदा एकत्र किया।

वास्तव में व्यावहारिक रूप से लगता है कि आप अपनी जेब से ही यह चंदा दे रहे हैं, क्योंकि इसमें 51,000 रुपए तो आपने खुद ही दिए हैं, और बाकी का चंदा भी आपके कुछ निकटतम लोगों से मिला है।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि कीर्ति मंदिर में काम ठीक तरह से आगे बढ़ रहा है।

आशा है, सानंद होंगे।

आपका शुभचिंतक

वल्लभभाई[13]

श्री ननजी कालिदास मेहता

पोरबंदर

[मूल: गुजराती] 21 नवंबर, 1948

सोमनाथ मंदिर के पुनर्निर्माण में सरदार पटेल की भूमिका का स्मरण

मंदिर की दशा देखकर द्रवित हुए सरदार

''सरदार जूनागढ़ से सोमनाथ गए। सोमनाथ मंदिर की बेहद जीर्ण-शीर्ण स्थिति देखकर सरदार का दिल सचमुच रोने लगा'''जाम साहब से एक-दो शब्द कहकर सरदार समुद्र तट की ओर चले गए। [नवानगर के जाम साहब ने सौराष्ट्र के विलय में सरदार की सहायता की थी और वे सौराष्ट्र संघ के राजप्रमुख बने थे]। उन्होंने अपने हाथ में उन्होंने थोड़ा पानी लिया और उसे पृथ्वी को समर्पित

करते हुए धीमे लेकिन दृढ़ स्वर में बोले कि इस मंदिर का पुनर्निर्माण किया जाएगा और यह फिर से इसका गौरव बहाल होगा। बिजली की तेजी से यह समाचार देश के कोने-कोने में फैल गई, और देश की लाखों जनता के चेहरों पर खुशी छा गई।''[14]

मंदिर के पुनर्निर्माण को सरदार की स्वीकृति

तत्कालीन केंद्रीय कार्य मंत्री एन.वी. गाडगिल याद करते हुए कहते हैं :

''1 नवंबर, 1947 को सरदार और मैं सोमनाथ गए। वहाँ मैंने पुनर्निर्माण के बारे में सोचा और सरदार से यह बात कही, जिन्होंने उसे स्वीकृति दी। मंदिर के मुख्यद्वार पर खड़े होकर मैंने भारत सरकार के मंदिर का पुनर्निर्माण करने के निर्णय की घोषणा की। मैंने कहा कि हमारी स्वतंत्रता रचनात्मक हैं, विंध्वसक नहीं। वहाँ एकत्र हजारों श्रद्धालुओं ने इस घोषणा का जयकारे के साथ स्वागत किया। एक घंटे बाद वल्लभभाई ने देवी अहिल्याबाई होलकर द्वारा बनाए मंदिर-भवन में यही घोषणा की। तुरंत ही दस लाख रुपए मिलने का आश्वासन प्राप्त हो गया और इससे बड़ी बात क्या होगी कि संघबद्ध सौराष्ट्र का विचार भी बन गया। नवानगर के जाम साहब ने सरदार से वार्ता की और दो माह के अंदर अलग-अलग आकार की 342 रियासतों के साथ-साथ सौराष्ट्र रियासत का भी विलय संघ में हो गया।''[15]

वल्लभभाई और मैंने मंदिर के पुनर्निर्माण के लिए 50 लाख रुपए इकट्ठे किए

''....एक और महत्त्वपूर्ण कार्य मुझे याद है जो कि सोमनाथ मंदिर के जीर्णोद्धार का था। जूनागढ़ के स्वतंत्र होने पर सरदार पटेल और मैं वहाँ गए और वहाँ प्राचीन मंदिर के अवशेष देखे। एक दिन सुबह समुद्र तट पर चलते हुए मेरे मन में पुनरुद्धार का विचार आया और मैंने वल्लभभाई से इसका जिक्र किया। उन्होंने इसे स्वीकृति दी और उनकी सहमति से मैंने घोषणा की कि सोमनाथ का प्राचीन गौरव फिर से बहाल किया जाएगा। मैंने मंत्रिमंडल की काररवाई में इसे तैयार और दर्ज किया। मौलाना ने कहा कि इस स्थान को उसी स्वरूप में संरक्षित किया जाए। मैंने कहा कि इरादा उसे उसका पुराना मूल गौरव वापस दिलाना है और इस तरह से हिंदू और मुसलिमों के बीच अविश्वास की दीवार मिटा दी जाए। काठियावाड़ में हमें सोमपुरा समुदाय के कारीगर मिले जो पत्थरों पर उसी तरह की नक्काशी और चित्रण कर सकते थे जैसा कि प्राचीन काल में सोमनाथ मंदिर में हुआ करता था। मैंने उन्हें मंदिर के पुनरुद्धार में सहायता के लिए लगाने का निश्चय किया। वल्लभभाई और मैंने इस उद्देश्य के लिए 50 लाख रुपए इकट्ठे किए। इसके पूर्व यह कार्य केंद्र सरकार के जरिए कराने का निश्चय किया गया था। नेहरू ने इसे स्वीकृति नहीं दी। गांधीजी की सलाह पर यह काम किसी ऐसे ट्रस्ट को देने का निश्चय किया गया जिसमें केंद्र सरकार का एक प्रतिनिधि हो।

''भारत सरकार ने कार्य की निगरानी के लिए दो इंजीनियरों और एक वास्तुशिल्पी की समिति बनाई। सन् 1951 तक मंदिर के पूरे आधार के साथ-साथ आंतरिक वेदी भी तैयार हो चुकी थी और हमने राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद से आग्रह किया कि वे लिंगम के प्रतिष्ठापन में प्रमुख प्रतिभागी बनें। हमने उन्हें योजना के इतिहास और प्रगति के बारे में एक नोट दिया और वे पवित्र समारोहों में भाग लेने पर सहमत हो गए।[16]

''....उसी समय पाकिस्तानी समाचार-पत्रों ने इस काम [सोमनाथ मंदिर के पुनरुद्धार] के बारे में शोरगुल मचाना शुरू कर दिया और हमसे कहने लगे कि वे एक और महमूद गजनवी पैदा करेंगे और मंदिर को फिर से ध्वस्त करेंगे। नेहरू ने राय दी कि राष्ट्रपति समारोह में शामिल न हों। मंत्रिमंडल में भी इस पर चर्चा हुई। मैंने मुंशी से कहा कि अगर इस पूरे मामले के लिए कोई जिम्मेदार है तो वे मैं हूँ और वल्लभभाई हैं जिन्होंने मेरा समर्थन किया था। इसलिए मैं मंत्रिमंडल के सामने पूरा मामला स्पष्ट करूँगा। मैंने मंत्रिमंडलीय रिपोर्टों का हवाला देकर साबित किया कि नेहरू का यह आरोप सही नहीं है कि सारा कार्य मंत्रिमंडल को सूचित किए बिना किया जा रहा था। मौलाना और जगजीवन राम ने कहा कि मामले पर चर्चा हो चुकी है। भारत सरकार इस कार्य पर सौ हजार रुपए खर्च कर चुकी है। मैंने बात उठाई कि सरकार हजारों मसजिदों और मकबरों को सब्सिडी और अनुदान देती है और अगर वह थोड़ा धन एक हिंदू मंदिर के पुनरुद्धार पर भी खर्च कर दे तो इसमें कुछ भी आपत्तिजनक नहीं है। मैंने धर्मनिरपेक्षता का अर्थ सभी धर्मों में समानता ही समझा

था। सोमनाथ मंदिर के पुनरुद्धार से सरकार को लाखों लोगों की सद्‌भावना हासिल हुई और इससे सौराष्ट्र प्रांत का निर्माण आसान हो गया। लाखों हिंदू मूर्तिपूजा करते हैं और सब नेहरू की तरह बुद्धिजीवी नहीं हैं। हममें से कुछ दृढ़ आस्था की कमजोरी के शिकार होते हैं, मैंने कहा। चर्चा वहीं समाप्त हो गई और राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद समारोह में शामिल हुए। मैं समझता हूँ कि वे अपने निर्णय पर दृढ़ थे और उन्होंने नेहरू को अपना निर्णय बता दिया था। जरूरत पड़ने पर वे अपने गरिमामय पद से त्यागपत्र देने को भी तैयार थे।''[17]

□

4

सरदार पटेल, साम्यवाद और भारत के साम्यवादी दल

भारतीय साम्यवादी सरदार पर महात्मा गांधी की हत्या में शामिल होने का आरोप लगाते हैं

हमारे संवाददाता से

बेजवाड़ा, 31 जनवरी, 1948, साम्यवादी नेता श्री पी. सुंदरैया[18] ने यहाँ एक जनसभा में कहा कि हिंदू महासभा, आर.एस.एस. और सरदार पटेल ने भारत में फासीवादी शासन लाने के इरादे से महात्मा की हत्या की योजना बनाई थी। इस आरोप से लोगों के एक बड़े वर्ग में कटुता पैदा हो गई।

आंध्र प्रदेश भर से करीब 8,000 आर.एस.एस. के स्वयंसेवक शहर में रैली के लिए इकट्ठे हुए थे जो गांधीजी की हत्या के कारण रद्द कर दी गई।

साम्यवादियों के प्रचार से स्थिति और बिगड़ गई और जब आर.एस.एस. के स्वयंसेवकों की गाड़ी पर हमला हुआ तो हिंसा फूट पड़ी। एक स्वयंसेवक हमले में घायल हो गया।

गांधीनगर और गवर्नरपेट क्षेत्र में आर.एस.एस. स्वयंसेवकों और साम्यवादियों के बीच सड़कों पर लड़ाई की खबरें आई हैं। शाम 5 बजे तालुक कार्यालय में एक हथगोला भी फटा, लेकिन सौभाग्य से कोई घायल नहीं हुआ।

सब डिविजनल मजिस्ट्रेट ने एक सप्ताह के लिए धारा 144 लगा दी है। (मद्रास मेल, 1 फरवरी, 1948)

[नोट: स्टेट्समैन के एक पाठक के महात्मा गांधी की हत्या को देखते हुए उनसे त्यागपत्र की माँग करनेवाले भाषण की क्लिप के साथ बेहद दु:खी सरदार पटेल ने समाचार-पत्र की ये क्लिप नेहरू को भेज दी और साथ में यह पत्र भी भेजा।]

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैं समाचार पत्रों की दो कटिंग संलग्न कर रहा हूँ, एक आज के स्टेट्समैन की है, और दूसरी एक प्रसिद्ध स्तंभकार की है जिसका भाषण आज मद्रास मेल में छपा है। निस्संदेह उन्हें पता नहीं है कि मेरा इस्तीफा पहले से ही यहाँ पर मौजूद है। पिछली बार बंबई छोड़ने के मौके पर मैंने फिर से बापू को लिखा था, लेकिन उनकी अप्रत्याशित मृत्यु से वह बात बीच में ही रह गई…(3 फरवरी, 1948)[19]

मैं मजदूरों और गरीबों का मित्र होने का दावा करता हूँ

''मुझ पर दोषारोपण किया जाता है कि मैं राजाओं, पूँजीपतियों और जमींदारों का मित्र हूँ, लेकिन मैं मजदूरों और गरीबों का भी मित्र होने का दावा करता हूँ। गांधीजी का अनुयायी होने के कारण मैंने स्वयं कोई संपत्ति नहीं बनाई और मेरे पास कुछ है भी नहीं। हालाँकि, गांधीजी की तरह मैं पूँजीपतियों को यह समझाना चाहता हूँ कि उनका सच्चा कर्तव्य क्या है। मैं उस प्रचलन में नहीं पड़ना चाहता जिसमें कि नेतागण पड़ते हैं या बिना किसी कारण के राजाओं, पूँजीपतियों आदि की आलोचना करके लोकप्रियता हासिल नहीं करना चाहता।''[20]

अव्यवस्था और व्यवधान पैदा करना उनका उद्देश्य है : सरदार पटेल के उत्तर

प्रश्न : भारत में इसकी [साम्यवाद की] शक्ति क्या है? सरकार इस बारे में क्या रही है?

सरदार पटेल : भारत में साम्यवाद की शक्ति बहुत अधिक नहीं है। निस्संदेह, यह सुव्यवस्थित संगठन है जिसके पास कट्टर और ऊर्जावान समर्थक हैं। युद्ध के समय साम्यवादियों ने [विदेशी] सरकार का समर्थन किया और उसकी सहायता की। उन्होंने सरकार की सहायता करके अपनी शक्ति अर्जित की है। चूँकि [जुलाई 1945] में हमारे छूटने और सरकार सँभालने से उन्हें धक्का लगा है। रजाकारों [हैदराबाद में निजाम द्वारा समर्थित] ने उन्हें कुछ हथियार दिए हैं, लेकिन मुझे नहीं लगता कि वे ज्यादा कुछ कर पाने में सफल होंगे। वे लंबे समय तक नहीं टिक सकेंगे। हम उनसे निपटने में सक्षम हैं। जब तक वे मजदूरों या किसानों के उत्थान के लिए कार्य कर रहे हैं, हम कुछ दखल नहीं देंगे। हालाँकि अगर वे मजदूरों को हिंसा की ओर मोड़ेंगे तो हम उनसे कड़ाई से निपटेंगे। उनका उद्देश्य अव्यवस्था और व्यवधान पैदा करना है। हम ताकत या जबरदस्ती सरकार को अथवा संगठित मशीनरी को भंग करने देने की अनुमति नहीं दे सकते। मुझे भारत में साम्यवाद की अधिक संभावना नहीं दिखती। इसका कारण यह है कि उन्हें स्वतंत्रता संग्राम में सहायता नहीं की बल्कि इसका लाभ अपने को एकजुट करने में करते रहे। इस प्रकार उन्होंने पर्याप्त जनभावनाएँ अपने विरुद्ध कर लीं। [भारत में] सामान्य रुझान भारत की दलीय राजनीति में किसी विदेशी तत्त्व के विरुद्ध है।''[21]

एशिया में कम्यूनिस्ट धमकी

''पूर्वी एशिया में हमारी मुख्य समस्या बर्मा में विकसित हो रहे कम्यूनिस्ट खतरे की है। सरकारी सेनाओं की ओर से बहादुरीपूर्ण प्रतिरोध और रक्षात्मक रवैए के बावजूद उग्रवादी कई प्रांतों में अधिकार जमाए हैं। देश का आर्थिक जीवन पूरी तरह से रुक गया है। प्रशासन भंग होने के कगार पर है, और परिवहन तथा संचार की हालत अस्त-व्यस्त है। इंडोनेशिया में गणराज्य सरकार को दो मोर्चों पर लड़ाई झेलनी पड़ रही है—कम्यूनिस्टों से और हॉलैंड से। हालाँकि, ऐसे संकेत हैं कि सरकारी सेनाएँ कम्यूनिस्टों पर बढ़त हासिल कर रही हैं मलाया में, कम्यूनिस्ट ताकतों को उल्टा नुकसान झेलना पड़ा है, लेकिन देश अब भी खतरे से मुक्त नहीं हुआ है। चीन में शांतोन प्रांत की राजधानी और मध्य चीन के प्रवेश द्वार त्सिनान को खोने से राष्ट्रीय सरकार को गंभीर झटका लगा है। खास बात यह है कि देश में शांति के कोई संकेत नहीं हैं। वास्तव में भारत और जापान ही सुरक्षा तथा कानून और व्यवस्था के गढ़ बने हुए हैं, जिनको जनरल मैकआर्थर पूर्व में कम्यूनिस्ट विरोधी गढ़ों के रूप में बदलता पा रहे हैं।''[22]

एशिया में भारत की एकमात्र देश है जो कम्यूनिस्ट विस्तार को रोक सकता है।

ऐटली के आप [नेहरू] को लिखे पत्र के संदर्भ में, अगर मैं सुझाव दूँ तो इसे लंदन भेजने से पहले आपको मुझे भेजना चाहिए। यह संभव है कि मैं कुछ ऐसे सुझाव दे सकूँ जिन पर आप विचार कर सकते हैं। समस्या कठिन है; एक ओर, हमारे पास हांगकांग का साम्राज्यवादी इतिहास है; दूसरी ओर, हमें चीन में बढ़ते कम्यूनिस्ट खतरे को समझना है। अगर हांगकांग कम्यूनिज्म के विरुद्ध गढ़ है, तो इसे मजबूत बनाने के बारे में कुछ कहा जा सकता है, लेकिन अगर इसे मात्र साम्राज्यवादी राज्य ही बने रहना है तो स्पष्ट है कि हम कुछ नहीं कर सकते। हमें यह भी समझना होगा कि भारत ही एशिया का एकमात्र देश है जो कम्यूनिस्ट विस्तार को रोक सकता है। इसी के साथ, यह स्पष्ट है कि हम यह काम अकेले नहीं कर सकते। अगर हमें अपनी सीमा कम्यूनिस्ट घुसपैठ और अतिक्रमण से बचानी है, तो हमें बाहरी समर्थन और सहयोग पर निर्भर होना पड़ेगा। इस प्रकार, मैं ऐटली को जवाब भेजना पसंद नहीं करूँगा जिसका अर्थ वे गलत समझें या उनकी भावनाओं को ठेस पहुँचे। ऐसे में, हम भले ही हांगकांग के साम्राज्यवादी इतिहास से कितनी भी घृणा करें, हमें यह व्यावहारिक विचार मन में रखना होगा और इस तरह का रवैया अपनाना पड़ेगा जिसमें साम्राज्यवाद से किसी तरह का समझौता किए बगैर, उन व्यावहारिक विचारों के साथ पूरा न्याय करना होगा। (4 जून 1949)[23]

[नोट: नेहरू ने 2 जून, 1949 को लिखा था : ''…ब्रिटेन के उच्चायुक्त आर्किबाल्ड न्ये, लंदन से लौटते ही कल मुझसे मिलने आए। उन्होंने हांगकांग के बारे में ऐटली का संदेश मुझे दिया। ब्रिटिश सरकार इस मामले को लेकर चिंतित है क्योंकि उन्हें लगता है कि चीनी कम्यूनिस्टों के हांगकांग पर हमला करने की संभावना हो सकती है। यह किसी भी स्थिति में तीन और महीने तक नहीं हो सकता।

हालाँकि, वे आपात स्थितियों के लिए तैयार होना चाहते हैं। उन्होंने हमें सूचना दी है कि उन्होंने वहाँ सेना भेजने का प्रस्ताव किया है और वे नैतिक समर्थन चाहते हैं। मैं इस मामले में फँसने का प्रस्ताव नहीं करता हूँ। अगले तीन माह में क्या होगा, कोई नहीं जानता। मैं ऐटली को लिखे अपने जवाब की एक प्रति आपको भेजूँगा।][24] [सरदार पटेल के जीवनीकार, राजमोहन गांधी, पत्रों के इस आदान-प्रदान के बारे में कहते हैं, हालाँकि वल्लभभाई भारत की चीन नीति को आकार देने में सहयोग करना चाहते थे, लेकिन नेहरू को नहीं लगता था कि उन्हें किसी सहयोग की जरूरत है।[25] 5 जून को नेहरू ने सरदार को जवाब दिया, हांगकांग के बारे में ऐटली को जवाब पहले ही भेजा जा चुका है। मैं सुनिश्चित करूँगा कि वह आपको भी भेजा जाए''इस बीच चीन में कम्यूनिस्ट विदेशियों से सही व्यवहार कर रहे हैं और यहाँ तक कि व्यापार भी कुछ हद तक जारी है···''][26]

कम्यूनिस्ट खतरे के लिए लगातार सतर्कता

कानून और व्यवस्था के दायरे में कम्यूनिस्ट खतरे के लिए लगातार सतर्कता की जरूरत है। यह स्पष्ट है कि हम ऐसी स्थिति विकसित होने नहीं दे सकते जिसमें भारत की परिस्थितियाँ बर्मा, मलाया, इंडोनेशिया और चीन के समान हो जाएँ। पुलिस की समस्या से अधिक स्थिति नहीं बिगड़ने दी जाएगी और यहाँ तक कि समस्या कुछ बेहतर ही हुई है। खुफिया की सतर्कतापूर्ण निगरानी और सभी प्रासंगिक स्रोतों के बीच समन्वय इस तरह के विध्वंसक आंदोलन से निपटने के लिए आवश्यक है। हमें भूमिगत नेताओं और सक्रिय कार्यकर्ताओं पर भी निरंतर निगाह रखनी होगी। और, हमें सरकार के अंदर मौजूद कम्यूनिस्ट प्रकोष्ठों से सावधान रहना चाहिए, जिसका बढ़ता सबूत हमारे लिए गंभीर चिंता पैदा कर रहा है। हम सचिवालय अधिकारियों की उच्चस्तरीय समिति गठित करने का प्रस्ताव कर रहे हैं, जो समस्या को निरंतर समीक्षा के तहत रखेगी, नीतिगत मामलों में सरकार के निर्णय हासिल करेगी, और सुनिश्चित करेगी कि त्वरित तथा प्रभावशाली तरीके से लागू हों। आपको इस तरह का निकाय प्रांतीय दायरे में भी उपयोग मिलेगा।''[27]

कम्यूनिस्ट आतंकवाद उखाड़ फेंकने की जरूरत

''एक पार्टी ने हैदराबाद को दुनिया में बदनाम कर दिया। वह पार्टी कम्यूनिस्ट ही है···वे और कुछ नहीं, बल्कि हत्यारे और डकैत हैं। वे कहते हैं कि वे भारत में एक चीन बना देंगे, लेकिन वे भूल जाते हैं कि चीन में भी जो तरीके वे अपनाते हैं, वे यहाँ नहीं अपनाए जाते। चीन अलग तरह से काम करता था। वे निर्दोष महिलाओं और बच्चों की हत्याएँ नहीं करते। अगर वे सोचते हैं कि वे इन तरीकों से भारत में एक चीन बना लेंगे, तो वे मूर्खों के स्वर्ग में रह रहे हैं। महिलाओं और बच्चों समेत ग्रामीणों को गोली मार देना या निर्दयता से टुकड़े-टुकड़े कर देना कम्यूनिज्म नहीं है। मैं उनसे कहना चाहता हूँ कि उन क्रूरताओं में शामिल लोगों को उखाड़ फेंकने के लिए भरसक कार्य करूँगा।''[28]

भारतीय लोकतंत्र को कम्यूनिस्टों की चुनौतीः कुछ यादें

द्वारका प्रसाद मिश्रा[29] याद करते हैं—

स्वतंत्रता के बाद जब सामूहिक हत्याओं और पलायन, और बाद में कश्मीर समस्या ने स्वतंत्र भारत की पहली सरकार को असुरक्षित बना दिया था, तब कम्यूनिस्टों ने मौका पाया और खूनी उत्पात के सिलसिले के जरिए अराजकता फैलाने तथा उनके शब्दों में बुर्जुआ लोकतंत्र को समाजवादी लोकतंत्र में बदलने की कोशिश की। हैदराबाद के तेलंगाना क्षेत्र में उन्होंने किसानों के विद्रोहों को सफलतापूर्वक अंजाम दिया और अब वे भारत के अन्य हिस्सों में उसका विस्तार करना चाहते हैं। शहरी क्षेत्रों में उन्होंने हिंसा तथा आम हड़ताल पर ध्यान केंद्रित किया है। उन्होंने लड़ाकू दस्ते और गुरिल्ला दस्ते तैयार करने तथा कार्यकर्ताओं को पुलिस थानों पर छापा मारने और पुलिस टीमों पर हमला करने का प्रशिक्षण देने की कोशिश की। हिंसक गतिविधियों के जरिए उन्होंने देश भर में जनांदोलन शुरू करने की कोशिश की, और उन्हें उम्मीद थी कि वे लोगों को हथियार उठाकर सरकार को उखाड़ फेंकने के लिए तैयार कर देंगे। हालाँकि, गृह मंत्री पटेल ने तेजी से काम किया और कम्यूनिस्ट ढाँचे को सिर उठाते ही कुचल दिया। बहुत जल्द उनकी हिंसा अपनी धार और ताकत खो बैठी, और सुनियोजित जन अराजकता आतंकवादी गतिविधियों में बदल गई। तेलंगाना किसान विद्रोह रुक गया और जमींदारों

की अलग-अलग हत्याएँ होने लगीं। शहरों में ट्रेनों और बसों में बम फेंके जाने लगे, लेकिन व्यापक स्तर पर उस तरह का आतंकवाद खत्म हो गया, जो किसी तरह का विद्रोह करा सकता था। भारतीय सेना से कांग्रेस फासीवादियों की ओर अपनी बंदूकें, संगीन मोड़ देने और गोली चलाने का आह्वान निस्संदेह उनकी तीव्र निराशा का कार्य है।[30]

के.एम. मुंशी याद करते हैं

[मई 1948 में] ''...हैदराबाद कम्यूनिस्ट पार्टी ने अपनी पूर्व नीति को बदलते हुए एक परचा जारी किया था। हैदराबाद के भारत संघ में विलय तथा राज्य में जवाबदेह सरकार से यह कहकर इनकार किया गया कि भारत सरकार पूँजीवादी सरकार है।...खबरों से संकेत मिलता है कि निजाम की हुकूमत और कम्यूनिस्टों के बीच कुछ तालमेल ही नहीं था, बल्कि पश्चिम बंगाल के कम्यूनिस्टों ने रजाकारों को विस्फोट भिजवाने की प्रक्रिया भी शुरू की थी। कम्यूनिस्टों का नया रवैया लक्षणवादी है। कुछ समय के लिए उनका जो भी मत था, वह लोगों की आवाज था; जो उन्हें अनुकूल लगता था, वह हमेशा जनता के हित में होता था। नए प्रचार के अनुसार, भारतीय संघ में रियासतों का विलय कुल मिलाकर अलोकतांत्रिक कार्य था, जो क्रांतिकारी चेतना तथा लोगों के लोकतांत्रिक आंदोलन को कुचलने के लिए था। अगर भारतीय सेना हैदराबाद में निकलेगी, तो वह जनांदोलन को कुचल देगी। जहाँ-जहाँ लोक सरकार थी, वहाँ-वहाँ उन्होंने अपने कार्यकर्ताओं को सैनिकों की गतिविधियों का विरोध करने के लिए कहा, इस तरह से उनके छोटे सोवियत स्थापित हुए जो गाँवों पर आतंक, हत्या तथा आगजनी से कब्जा किए थे।

कम्यूनिस्ट पार्टी अब अपने को भारत विरोधी मोरचे पर निजाम की हुकूमत से संबद्ध किए है। भारत में भूमिगत रहे कम्यूनिस्ट अब हैदराबाद पहुँच गए हैं। भारतीय भूभाग से भगोड़ों ने रियासत में शरण ली और कुछ कम्यूनिस्ट नेता हैदराबाद में आजादी के साथ घूमते रहे और रियासत के मंत्रियों और उच्च अधिकारियों से उन्होंने संपर्क स्थापित किया, तथा निजाम के साथ समझौता करने का प्रयास किया। उन्होंने यह भी उम्मीद की कि उनका एक प्रतिनिधि हैदराबाद के मंत्रिमंडल में लिया जाए ताकि निजाम की हुकूमत में उनकी घुसपैठ की हल्की सी शुरुआत हो जाए।''[31]

अनुभवहीन भारतीय राज्य को कम्यूनिस्टों द्वारा भारी नुकसान पहुँचाना

''मार्च 1948 से शुरू हुई कम्यूनिस्ट गतिविधियों से हुए कुल नुकसान का आकलन कठिन है। सन् 1950 में प्रमुख कम्यूनिस्ट नेता रवि नारायण रेड्डी ने अपनी पार्टी को बताते हुए दावा किया कि पिछले दो-तीन सालों में 3000 से अधिक लोगों की हत्याएँ हुईं और 3,800 डकैतियाँ हुईं। फरवरी 1948 और अगस्त, 1950 के बीच इन जिलों में भूमिगत हो चुके सुविस्तारित कम्यूनिस्ट 223 हत्याओं, 24 अपहरणों और 199 घर जलाने की घटनाओं के लिए जिम्मेदार थे।

पुलिस काररवाई के बाद हैदराबाद हुकूमत को सन् 1952 तक कड़े कदम उठाने पड़े, तब कम्यूनिस्ट प्रभाववाले सिर्फ तीन जिलों में सामान्य स्थिति बहाल की जा सकी। भारत सरकार ने इस अभियान के लिए 60 लाख रुपए खर्च किए। राज्य का पुलिस बजट सन् 1948-49 में 2,46,83,995 रुपए था जो सन् 1950-51 में बढ़कर 5,64,30,083 रुपए हो गया, सन् 1951-52 में बढ़कर 6, 91,71,156 रुपए हो गया और सन् 1952-53 में 4,72,22,000 रुपए हो गया। इन आँकड़ों में सेना का खर्चा शामिल नहीं है, जिसे कानून और व्यवस्था बहाल करने के लिए राज्य में तैनात किया गया था।

इसके अतिरिक्त राज्य से कम्यूनिस्ट खतरे को हटाने के लिए 9000 होमगार्ड, 553 गाँव चौकीदार तैनात करके भारी खर्चा करना पड़ा। इसके लिए वारंगल और नलगोंडा में बड़े पैमाने पर सुधारात्मक कार्य करने तथा जंगलों के लिए छह सौ मील की सड़कें तैयार करने की लागत भी जोड़ी जानी चाहिए।

मार्च और सितंबर के बीच कम्यूनिस्टों और रजाकारों की भारी चंदा वसूली; गाँव और गाँव के रिकॉर्ड जलाने; संपत्ति की लूट; संदिग्धों, विरोधियों तथा ग्रामीण अधिकारियों की हत्याएँ; पुलिस, होमगार्ड तथा अधिकारियों और लोगों पर हमले; कम्यूनिस्टों द्वारा पुलिस थाने जलाने और रजाकारों की बदले की काररवाइयों जैसी गतिविधियों ने लोगों पर भारी बोझ डाला।''[32]

□

5

सरदार पटेल और भारतीय मुसलिम

सरदार पटेल का अल्पसंख्यकवाद का विरोध

''...आप सभी जानते हैं कि अल्पसंख्यकों के लिए सुरक्षा के उपायों पर कई बार चर्चा की गई और विभिन्न समितियों में इस पर विचार किया गया। चर्चा के लिए कोई नया बिंदु नहीं है। किसी-न-किसी समिति में इस प्रश्न पर बारीकी से या व्यापक रूप से सालों तक चर्चा होती रही है। कई बार इस बहस ने तीखा रूप लिया तो कई बार कटु विवाद के रूप में सामने आई। हालाँकि मैं यह कहते हुए प्रसन्न हूँ कि यह रिपोर्ट [अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर रिपोर्ट] अल्पसंख्यकों और बहुसंख्यकों के बीच विचारों की सहमति का परिणाम है। इस प्रकार, हालाँकि सभी को संतुष्ट करना तो संभव नहीं है, लेकिन आप पाएँगे कि यह रिपोर्ट कई बिंदुओं पर सहमति का परिणाम है; और जहाँ कहीं असहमति है, वहाँ अनुशंसाएँ बहुत बड़े बहुमत से कही गई हैं, और शायद एक बिंदु को छोड़कर सारी रिपोर्ट व्यावहारिक रूप से सहमति की रिपोर्ट है। हो सकता है कुछ लोग कुछ बिंदुओं पर सहमत न हों, लेकिन हमें बड़े-छोटे अल्पसंख्यकों की भावनाओं के सारे बिंदु ध्यान में रखने होंगे। हमने जितना संभव हो सका, अल्पसंख्यकों की सारी इच्छाएँ पूरी करने की कोशिश की है। अल्पसंख्यक अपने आप में भी विभाजित हैं; उनमें आपस में ही विवाद हैं। अल्पसंख्यकों के इन आपसी मतभेदों का हमने लाभ उठाने की कोशिश नहीं की; बल्कि हमने यह देखने की कोशिश की कि आपसी मतभेदों के बावजूद अल्पसंख्यक अपने हितों की सुरक्षा के लिए अपने आपको एक मोरचे पर दिखाने की कोशिश कर रहे हैं।...[33]

''...इस रिपोर्ट में बहुत सारे ऐसे उपाय गिनाने का प्रयास किया गया है जो आम लोगों की जानकारी में है, जैसे विधायिका में प्रतिनिधित्व जो कि संयुक्त बनाम अलग निर्वाचक मंडल का है। यह ऐसा सवाल है करीब एक दशक से विवाद पैदा करता रहा है और इसके लिए हमें काफी तकलीफ उठानी पड़ी है और इसके लिए कीमत चुकानी पड़ी है। हालाँकि, सौभाग्य से हम इस सवाल से इस तरह निपटने में सक्षम हुए हैं कि इस बिंदु पर एक राय है कि अलग निर्वाचक मंडलों की कोई आवश्यकता नहीं है और हमें संयुक्त निर्वाचक मंडल ही रखने चाहिए। इस प्रकार यह बड़ा लाभ है...[34]

''...मुसलिम लीग के मेरे जिन मित्रों ने यह संशोधन पेश किया है और इसके समर्थन को सहज मान लिया है कि उन्होंने एक अर्थ में अपना कर्तव्य पूरा किया है। वे अलग निर्वाचक मंडल के लिए दबाव डाल रहे हैं और लंबे समय से इसका लाभ उठाते रहे हैं तथा महसूस करते हैं कि अचानक इस सुविधा को नहीं छोड़ना चाहिए, बल्कि प्रस्ताव पेश करना और सदन में मत हासिल करना चाहिए। हालाँकि जब मैंने विस्तृत भाषण सुने तो मुझे लग रहा था कि मैं ऐसे युग में रह रहा हूँ जिसमें सांप्रदायिक प्रश्न पर पहली बार चर्चा हो रही है। मुझे ऐसे भाषण सुनने का मौका नहीं मिला जिसमें कांग्रेस के सामने सांप्रदायिक निर्वाचक मंडल का प्रश्न पेश करते समय शुरुआती भाषण हो रहे हों; लेकिन अनेक प्रमुख मुसलिम हैं जिन्होंने अपने विचारों में दर्ज कराया है कि यह देश की विशालतम बुराई है, जो इस सांप्रदायिक निर्वाचक मंडल बनाने के लिए लाई गई है। सांप्रदायिक निर्वाचक मंडल की प्रणाली एक विष है जो हमारे देश के राजनीतिक जीवन में प्रवेश कर चुकी है। कई अंग्रेजों ने भी इस बात को स्वीकार किया है,जबकि वे ही इसके लिए जिम्मेदार हैं।

चलिए, जब पाकिस्तान नहीं बना था, तब तो कम-से-कम यह सोचा गया था बाकी 80 प्रतिशत भारत में एक राष्ट्र होगा। भारत में यहाँ भी दो राष्ट्रों के बारे में कोई चर्चा का प्रयास नहीं होगा। यह कहने का कोई अर्थ नहीं कि हम सिर्फ इसलिए अलग निर्वाचक मंडल की माँग करें क्योंकि वे हमारे लिए लाभदायक हैं। हम इस बारे में बहुत सुन चुके हैं। सालों से हम यह सुनते आ रहे हैं और इस आंदोलन के परिणामस्वरूप ही हम एक अलग राष्ट्र हैं। आंदोलन यह था कि ''हम एक अलग राष्ट्र हैं, हम अलग निर्वाचक मंडल या अन्य कोई लाभ या रियायत या छूट अपने संरक्षण के लिए नहीं ले सकते हैं। इसलिए हमें पृथक राष्ट्र दीजिए।'' हमने कहा, ''ठीक है, पृथक राष्ट्र ले लो।'' लेकिन शेष भारत को, 80 प्रतिशत भारत को क्या आप एक राष्ट्र रहने देने पर सहमत हैं? या अब भी आप यहाँ भी दो राष्ट्रों की बात करना चाहते हैं? मैं अलग निर्वाचक मंडलों के खिलाफ हूँ। क्या आप किसी ऐसे स्वतंत्र राष्ट्र का नाम बता सकते हैं, जिसमें अलग-अलग निर्वाचक मंडल हों? अगर हाँ, तो मैं भी इसे स्वीकार करने को तैयार हूँ। हालाँकि इस दुर्भाग्यग्रस्त देश में अगर अलग-अलग निर्वाचक मंडलों के लिए आग्रह जारी रहता है, तो देश के विभाजन के बाद भी देश भुगतता रहेगा; रहने लायक नहीं रह जाएगा। इसलिए मैं कहता हूँ, यह सिर्फ मेरी भले की बात नहीं है, बल्कि यह आपके भले की भी बात है, 'अतीत को भूल जाइए'''मेरे मित्र'''संशोधन पेश करनेवाले मित्र कहते हैं कि मुसलिम समुदाय मजबूती से जुड़ा समुदाय है, बहुत अच्छे; मुझे यह सुनकर अच्छा लगा, और इसीलिए मैं कहता हूँ कि आपको किसी संरक्षण के बारे में बात करने की जरूरत नहीं है। (हर्षध्वनि)। क्योंकि अन्य अल्पसंख्यक भी हैं जो सुसंगठित नहीं है, और उनके लिए कुछ विशेष उपायों और विचारों की जरूरत है, हम उनके प्रति उदारता दिखाना चाहते हैं। हालाँकि, इसके साथ ही, जैसा कि पिछले काफी समय से आप कुछ हद तक इसका लाभ उठाते रहे हैं, और आपको यह नहीं लगना चाहिए कि किसी तरह का भेदभाव हो रहा है, इसलिए हम आबादी के आधार पर आरक्षण के लिए सहमत हैं। इस तरह का आरक्षण दुनिया के किसी स्वतंत्र देश में कहाँ है? क्या आप मुझे बताएँगे? मैं आपसे पूछता हूँ। आपका समुदाय बहुत संगठित समुदाय है। बताइए, क्यों आप लंगड़े-लूलों की तरह व्यवहार करना चाहते हैं? साहसी और मजबूत बनिए, क्योंकि आप सुसंगठित हैं, उठ खड़े होइए। उस राष्ट्र के बारे में सोचिए जो इस तरफ बना है। हमने एक देश की नींव डाली है। जब ब्रिटिश सरकार ने इस तत्त्व की शुरुआत की थी, तब उन्हें अनुमान नहीं था कि उन्हें इतनी जल्दी जाना पड़ेगा। वे आसान प्रशासन चाहते थे। ठीक है, लेकिन अब वे अपनी विरासत पीछे छोड़ गए हैं। क्या हमें उससे बाहर नहीं निकलना चाहिए? इसीलिए मैं कहता हूँ, और आपसे अपील करता हूँ। 'आप क्या कर रहे हैं?' इसके बारे में सोचिए। इस देश में मुसलिम लीग से बाहर क्या एक भी इनसान ऐसा है जो कहेगा, 'चलिए हम अलग-अलग निर्वाचक मंडलों पर सहमत हो जाते हैं, आप ऐसा क्यों कर रहे हैं? अगर आप कहेंगे अब हम इस देश के प्रति निष्ठा रखना चाहते हैं', तो मैं आपसे पूछता हूँ, 'ये निष्ठा है क्या?' क्या आप दूसरे पक्ष की ओर से निष्ठा की प्रतिक्रिया को उकसा रहे हैं? मेरे इस पर बोलने का कोई इरादा नहीं है, लेकिन संशोधन पेश करनेवाले ने इतनी देर तक बोला और नेता ने इसका समर्थन किया, तो मुझे लगा कि इस देश में फिर से कुछ गलत हो रहा है। इसलिए, मेरे प्रिय मित्रो, मैं पूछता हूँ, 'क्या आप इस भूमि के टुकड़े करना चाहते हैं? अगर ऐसा है तो ठीक है मेरी आपसे अपील है, 'इस ओर, कम-से-कम एक बार दिखा दीजिए कि सब कुछ भुला दिया गया है' और अगर हम भूलना चाहते हैं तो हमें अतीत में जो कुछ हुआ, उसे भूल जाना चाहिए, जो उस सबके लिए जिम्मेदार है, जो आज हो रहा है। इसलिए मैं एक बार फिर आपसे अपील करता हूँ कि संशोधन को वापस ले लीजिए और एकमत से यह पारित किया जाए ताकि बाहरी जगत को भी यह समझ में आ जाए कि हम एकजुट हैं।''[35]

[नोट : मद्रास से मुसलिम सदस्य पोकर साहिब बहादुर ने निम्न संशोधन पेश किया था :

''अल्पसंख्यकों, मूल अधिकारों आदि के बारे में सलाहकार समिति की एक रिपोर्ट पर विचार करने पर, संविधान सभा की यह बैठक अल्पसंख्यक अधिकारों पर यह निश्चय करती है कि केंद्रीय और प्रांतीय विधायिका के सभी चुनाव, जहाँ तक मुसलिमों का संबंध है, अलग निर्वाचक मंडलों के आधार पर होंगे, इसके बाद एक विस्तृत बहस हुई, जिसमें अनेक सदस्यों ने स्वतंत्र भारत में या कम-से-कम भारत के बचे हिस्से में अल्पसंख्यकों के लिए अलग निर्वाचक मंडल या किसी विशेष व्यवहार की जरूरत को नकार दिया। पूरी बहस सुनने के बाद सरदार पटेल ने उक्त जवाब दिया था।]

आप चाहते क्या हैं, चलिए भुला देते हैं और एक राष्ट्र बनते हैं

''....अब देश का विभाजन पूरा हो चुका है, और आप कहते हैं कि इसे फिर से पेश करना चाहिए और फिर एक और विभाजन होगा। यह कैसा प्रेम का तरीका है। इसलिए, हालाँकि मैं इस प्रस्ताव पर कुछ कहना नहीं चाहता था, लेकिन मुझे लगता है कि यह बेहतर होगा कि हम एक-दूसरे के मन को पूरी तरह से समझें, ताकि हम समझ सकें कि हम कहाँ खड़े हैं। उस प्रक्रिया को अगर फिर से अपनाया गया, जिसने देश का विभाजन कराया, तो मैं कहना चाहता हूँ—जो लोग इस तरह की चीज चाहते हैं, उनका स्थान पाकिस्तान में है, यहाँ नहीं (हर्षध्वनि)। यहाँ हम एक राष्ट्र बना रहे हैं, और हम एक राष्ट्र की नींव रख रहे हैं, और जो दोबारा विभाजन को पसंद करते हैं, और अव्यवस्था के बीज बोते हैं, उनके लिए यहाँ कोई जगह नहीं है, और मुझे यह कहना होगा कि यह एकदम पर्याप्त है। (वाह, वाह) आप दोनों विकल्प नहीं चुन सकते। इसलिए, मेरे मित्रो, अपना रवैया बदलिए, परिवर्तित परिस्थतियों में अपने को ढालिए। और यह कहने का बहाना मत कीजिए, ''अरे, हम आपको बहुत प्यार करते हैं।'' हम आपका प्यार देख चुके हैं। इसकी क्यों चर्चा करते हैं? आइए, इस प्यार को भुला दें। आइए, हकीकत का सामना करते हैं। अपने आप से पूछिए कि क्या आप वाकई यहाँ हमारे साथ रहना चाहते हैं या दोबारा बाधाकारी चालें चलना चाहते हैं। इसलिए जब मैं आपसे अपील करता हूँ, मैं आपसे अपील करता हूँ अपने हृदय को बदलने की, न कि अपनी भाषा बदलने की, क्योंकि वह यहाँ नहीं चलनेवाली। इसलिए मैं अब भी अपील करता हूँ, 'मित्रो, अपने रवैए पर फिर से विचार कीजिए और अपने संशोधन को वापस ले लीजिए।' क्यों यह कहे जा रहे हैं, 'अरे, मुसलिमों की नहीं सुनी जाती; मुसलिम संशोधन नहीं लाए जाते।' अगर इससे आपको लाभ हो रहा है तो आप बहुत गलती पर हैं, और मैं जानता हूँ कि यहाँ वर्तमान परिस्थितियों और वर्तमान परिवेश में मुसलिम अल्पसंख्यकों की सुरक्षा करना मुझे कितना महँगा पड़ता है। इसलिए मेरा सुझाव है कि जिस तरह का आंदोलन आपने चलाया, उसके दिन खत्म हो गए और एक नया अध्याय शुरू हुआ है। इसलिए मैं एक बार फिर अतीत को भुलाने की अपील करता हूँ। जो हुआ, उसे भूल जाइए। आप जो चाहते थे, वह आपको मिल गया। आपको अलग राष्ट्र मिल गया और याद रखिए, आप लोग ही इसके लिए जिम्मेदार हैं, जो पाकिस्तान में हैं, वे नहीं। आपने आंदोलन का नेतृत्व किया। आपको वह मिल गया। अब आप यह क्या चाहते हैं? मैं समझ नहीं पा रहा हूँ। हिंदू बहुल प्रांतों में आप अल्पसंख्यक हैं, आपने आंदोलन किया। आपको विभाजन मिल गया और अब फिर से आप मुझसे कहते हैं और मुझसे अपने छोटे भाइयों के प्रेम को सुरक्षित करने का उद्देश्य पूछते हैं कि मैं फिर से उसी पर सहमत हो जाऊँ, विभाजित हिस्से में देश को फिर से विभाजित करने के लिए। भगवान के लिए समझिए कि हमें भी कुछ अक्ल है। हमें चीजें स्पष्ट तरीके से समझने दीजिए। इसलिए जब मैं कहता हूँ कि हमें अतीत को भूलने दीजिए, मैं पूरी ईमानदारी से कहता हूँ। आपके साथ कोई अन्याय नहीं होगा। आपके प्रति उदारता रहेगी, लेकिन यह दोनों तरफ से होगा। अगर ऐसा नहीं है, तो आपकी मीठी बातों के पीछे छिपे आपके शब्द छिपे नहीं रहेंगे। इसलिए मैं साफ तौर पर मजबूती से एक बार और अपील करता हूँ कि सब भूलिए और आइए, एक राष्ट्र बनते हैं।''[36]

[नोट : सरदार पटेल के दृष्टिकोण के विरोध में जो कहा गया]

मुसलिमों का संसाधनों पर पहला दावा होना चाहिए : प्रधानमंत्री

नई दिल्ली : प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने शनिवार को कहा कि अल्पसंख्यकों, विशेषकर मुसलिमों का संसाधनों पर पहला दावा होना चाहिए ताकि विकास का लाभ उन तक समान रूप से पहुँचे। 'अल्पसंख्यक, खासकर मुसलिम अल्पसंख्यकों को विकास का फल समान रूप से मिले, इसके लिए हमें नया तरीका निकालना होगा। उनका संसाधनों पर पहला दावा करना होगा', उन्होंने राष्ट्रीय विकास परिषद् की 52वीं बैठक में अपने भाषण में कहा था।

[स्रोत: पी.टी.आई., 9 दिसंबर, 2006, टाइम्स ऑफ इंडिया, 9 दिसंबर, 2006]

ये जो कहा गया, उसमें सरदार पटेल के दृष्टिकोण की प्रतिध्वनि

संसाधनों पर पहला हक गरीब का होना चाहिए, अल्पसंख्यकों का नहीं : मोदी

नाना पोंडा : अल्पसंख्यकों का देश के संसाधनों पर पहला अधिकार होने के प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के आग्रह पर विवाद खड़ा करते हुए मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी ने शुक्रवार को कहा कि अगर संसाधनों पर अधिकार की बात है तो सिर्फ देश के गरीब को यह अधिकार होना चाहिए। मुख्यमंत्री वलसाड जिले में कपराडा तालुक के नाना पोंडा गाँव में आदिवासियों को संबोधित करना चाहिए। कांग्रेस पर वोट बैंक की राजनीति करने का आरोप लगाते हुए मुख्यमंत्री ने कहा कि आदिवासियों, दलितों और आर्थिक रूप से कमजोर अन्य लोगों का देश के संसाधनों पर अधिकार होना चाहिए, और उन्होंने आदिवासियों से बदलाव के लिए वोट देने का आग्रह किया।

[स्रोत: द टाइम्स ऑफ इंडिया, 17 अप्रैल, 2009]

मैं सत्य का साथ नहीं छोड़ सकता

''मैं स्पष्टवादी व्यक्ति हूँ। मैं हिंदू और मुसलिम, दोनों से कड़वी बातें बोलता हूँ। साथ ही मैं कहता हूँ कि मैं मुसलिमों का सच्चा मित्र हूँ, जैसा कि मैंने कई बार कहा है। अगर मुसलिम इस रूप में स्वीकार नहीं करते तो वे पागलों जैसा काम करेंगे। हालाँकि इस रवैए के लिए मैं सत्य का साथ नहीं छोड़ सकता। मैं कर्तव्य के आसन से नहीं उतर सकता। उनमें से कुछ गांधीजी के पास गए और उनसे मेरे लखनऊ भाषण की शिकायत की, जिसमें मैंने कश्मीर पर पाकिस्तान के रवैए की आलोचना न करने के लिए उनकी आलोचना की। उन्होंने जाकर गांधीजी से कई बातें कहीं और गांधीजी को मजबूर होकर मेरा बचाव करना पड़ा। मेरे लिए यह तकलीफ की ही बात है, क्योंकि आखिरकार मैं कोई कमजोर व्यक्ति नहीं हूँ कि मुझे अपने बचाव के लिए किसी अन्य की सहायता की जरूरत पड़े।''[37]

अब एक राह पर चलना आपका कर्तव्य है

''...मैं भारतीय मुसलिमों से सिर्फ एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ। हाल के ऑल इंडिया मुसलिम कॉन्फ्रेंस में आप लोगों ने कश्मीर मुद्दे पर अपना मुँह क्यों नहीं खोला? आपने पाकिस्तान के कृत्य की आलोचना क्यों नहीं की? ये चीजें लोगों के मन में संदेह पैदा करती हैं। इसलिए मुसलिमों के मित्र के रूप में यह बात मैं कहना चाहता हूँ और अच्छे मित्र का कर्तव्य भी स्पष्ट बोलना होता है। अब एक ही नाव पर सवार होना आपका कर्तव्य है और डूबना या तैरना साथ ही हो। मैं आपसे बहुत स्पष्ट कहना चाहता हूँ कि आप दो नावों पर सवारी नहीं कर सकते। आपको जो नाव बेहतर लगे, उस पर सवारी कीजिए।''[38]

मुसलिम कट्टरता के विरोध में हिचक को वे पसंद नहीं करते थे

''सरदार पटेल को बहुत गलत समझा गया। व्यवस्था और अनुशासन के प्रति उनके आग्रह को अक्सर अधिकारों का रौब जमाने की उनकी इच्छा माना गया। वे हिंदुओं की तरह ही मुसलिमों के अधिकारों की सुरक्षा में विश्वास करते थे, लेकिन मुसलिम कट्टरवाद का विरोध करने में नेहरू और अन्य लोगों की हिचक को पसंद नहीं करते थे...।[39]

□

6

सरदार पटेल के फँसे हुए हिंदुओं के बारे में बयान

सरदार पटेल ने हिंदुओं को काफिर बतानेवाले परचों का विरोध किया

कुछ समय पहले, तालीम-उल-इसलाम नामक प्रकाशन के बारे में मुझे बताया गया कि उसमें हिंदुओं को काफिर कहा गया है और इस तरह से जिक्र किया गया है कि जैसे वे स्थायी धिक्कार के पात्र हों और सब जहन्नुम जानेवाले हों। प्रकाशन का संकलन मुफ्ती कैफियतउल्ला ने किया था, जिसके मुसलिम स्कूलों के बच्चों के बीच मुफ्त में बाँटा और पढ़ा गया। जब उस पाठ की ओर मेरा ध्यान खींचा गया तो मैंने मौलाना हफीजुर रहमान से बात की और उनसे कहा कि मुझे इस बात का बेहद दुःख है कि मुफ्ती साहब ऐसे प्रकाशन से जुड़े हैं और यह स्वतंत्रता के बाद भी जारी है। मैंने बताया कि इस तरह की बातें दिमाग में भरने से मासूम बच्चों का शुरू से ही अलग दृष्टिकोण बन जाता है और यह बात खासतौर पर दुर्भाग्यपूर्ण है कि ऐसी नाजुक उम्र में उन्हें गलत तरह की धार्मिक शिक्षा दी जा रही है। मौलाना हफीजुर रहमान ने अंत में मुझे लिखा कि उन्होंने मुफ्ती साहिब से बात की है और आपत्तिजनक अंश आगामी प्रकाशनों में सुधार लिए जाएँगे। इस बीच मैंने शंकर प्रसाद [आई.सी.एस., मुख्य आयुक्त, दिल्ली] से इस मामले को देखने को कहा। उन्होंने मौलाना अहमद सईद से चर्चा की जिन्होंने तर्कों की मजबूती को अच्छी तरह से स्वीकार किया, क्योंकि वे जानते थे कि मुगलकाल में भी हिंदुओं को काफिर नहीं, बल्कि मात्र मुनकिर कहा जाता था। मौलाना अहमद सईद ने मुफ्ती साहिब से संपर्क किया तो उन्होंने तर्क दिया कि इस बात पर पिछले 30 सालों से कभी आपत्ति नहीं की गई और तभी से यह इस्तेमाल में है। इज्जत की खातिर उनके लिए अपनी बात से पलटना कठिन था, लेकिन मौलाना उनके बेटे और प्रकाशक को यह समझाने में सफल रहे कि वे आपत्तिजनक अंश को हटा दें। शंकर प्रसाद ने मुझे बताया कि जमीयत के आधिकारिक मुखपत्र मौलवी जैसे कुछ प्रकाशन हैं, जो समय-समय पर इस तरह की सामग्री प्रकाशित करते रहते हैं। उस अखबार के संपादक को चेतावनी दी गई और सावधानी बरतने को कहा गया।

मुझे प्रसन्नता है कि मामला मैत्रीपूर्ण ढंग से सुलझ गया। मुझे लगा कि इसके बारे में आपको भी बताना चाहिए। यह वाकई दुर्भाग्य की बात है कि हमारे कुछ राष्ट्रवादी मित्र भी इस तरह के धार्मिक कट्टरवाद में शामिल हो जाते हैं।[40]

[नोट : 15 अक्तूबर, 1949 को सरदार ने मौलाना हफीजुर रहमान, जमीयत उलेमा हिंद, गली काजिमजान, दिल्ली को लिखा था :

''एक दिन मैंने आपसे तालीम-उल-इसलाम प्रकाशन के बारे में बात की थी। खेद के साथ कहना पड़ रहा है कि उसके संकलकों में मौलवी मुफ्ती कैफियत उल्ला थे। अब मैंने प्रकाशन को देखा है और पाया है कि नवीनतम प्रति जून 1949 में प्रकाशित हुई थी और उसमें मुफ्ती कैफियत उल्ला ने भूमिका लिखी थी। यह पुस्तक का सोलहवाँ संस्करण है, जिससे उसकी लोकप्रियता का पता चलता है। ऐसा लगता है कि प्रकाशन में बच्चों के लिए उपयुक्त आसान भाषा इस्तेमाल की गई है, और यह किताब इसलामी और कौमी स्कूलों में पाठ्यक्रम में शामिल की गई लगती है।''[41]

सरदार पटेल ने पाकिस्तान से हिंदू शरणार्थियों के लिए जमीन देने को कहा

''पूर्वी बंगाल की समस्या कठिन है। वहाँ करीब डेढ़ करोड़ हिंदू हैं। पूर्वी बंगाल के लोग दयनीय हालत में हैं। बिना कारण कोई अपना घर-बार नहीं छोड़ना चाहता। उनकी बदहाली उन्हें पलायन करके भारत आने पर मजबूर करती है। यह मुद्दा निस्संदेह गंभीर है और इसकी गंभीरता पाकिस्तान को स्पष्ट कर दी गई है। पूर्वी बंगाल छोड़कर शरणार्थी बनकर भारत आए हिंदुओं को लौटना होगा। पाकिस्तान को वहाँ ऐसी स्थिति तैयार करनी होगी कि वे अपने घरों में शांति से रह सकें। उनका उत्पीड़न और अत्याचार से बचाव करना होगा। उन्हें आश्वस्त करना होगा कि पाकिस्तान में उनका जीवन खतरे में नहीं है। मैंने कुछ समय पहले सुझाव दिया था कि अगर बहुत बड़ी संख्या में हिंदू असंतोषप्रद परिस्थितियों के कारण पूर्वी बंगाल छोड़ने पर मजबूर हो रहे हैं, तो पाकिस्तान सरकार को उन्हें बसाने के लिए अतिरिक्त जमीन मुहैया करानी चाहिए''।''[42]

पूर्वी पाकिस्तान से आनेवाले शरणार्थियों के प्रति व्यवहार को लेकर सरदार पटेल और नेहरू के मतभेद

''नेहरू और पटेल के बीच मतभेद गांधीजी की हत्या की पूर्व संध्या पर उनके दखल के बाद खत्म हुए थे, और राजेंद्र प्रसाद के गणराज्य के पहला राष्ट्रपति चुने जाने के समय फिर से उबर आए थे। ये मतभेद 1950 के आरंभ में गहरा गए थे, जब पाकिस्तान ने पूर्वी बंगाल में हिंदू अल्पसंख्यकों का उत्पीड़न शुरू कर दिया था''उनकी आबादी घटाई जाने लगी थी। उनकी तकरार जनवरी में हल्के रूप में शुरू हुई थी, लेकिन मार्च तक बहुत तीखे रूप में सामने आने लगी। पश्चिम बंगाल पर बोझ पहले से ही अधिक था, जो अब असहनीय हो गया था। कांग्रेस संसदीय दल के सदस्यों के बीच असंतोष दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था और मंत्रिमंडल भी नेहरू की पाकिस्तान नीति पर दो समूहों में बँट चुका था। नेहरू पटेल के रवैए से नाराज थे क्योंकि पटेल का कहना था कि अगर पाकिस्तान में हिंदुओं को सुरक्षित तथा सम्मानजनक अस्तित्त्व की गारंटी नहीं दे सकता तो उसे मजबूर किया जाना चाहिए कि वह उन्हें बसाने के लिए भारत को पूर्वी बंगाल का एक हिस्सा दे। पार्टी को पटेल के समर्थन में देख नेहरू ने उन्हें पत्र लिखकर इस्तीफे की पेशकश की। पटेल ने फिर से उनसे भावनाओं में न बहने का अनुरोध किया और उनका समर्थन करने का वचन दिया।''[43]

□

7

सरदार पटेल की चीन-तिब्बत सीमा पर अंतर्दृष्टि

कम्यूनिस्ट ताकतों को जितना दूर रखें उतना ही बेहतर

हमें सिक्किम के साथ-साथ तिब्बत में अपनी स्थिति मजबूत करनी होगी। कम्यूनिस्ट ताकतों को हम जितना दूर रखें, उतना ही बेहतर होगा। तिब्बत लंबे समय से चीन से अलग रहा है। मुझे लग रहा है कि कम्यूनिस्ट शेष चीन में अपने को स्थापित करते ही तिब्बत की स्वायत्तता नष्ट करने की कोशिश करेंगे। ऐसी परिस्थितियों में आपको अपनी तिब्बत नीति पर सावधानी से विचार करना चाहिए और उसके हिसाब से अपने को तैयार करना चाहिए। (4 जून, 1944)[44]

सरदार पटेल का तिब्बत के बारे में चीन की योजना का अनुमान

''…अभी तक ऐसा कोई सबूत नहीं मिला है कि चीन में कम्यूनिस्ट जीत से उत्तरी बर्मा की स्थिति पर असर पड़ रहा हो। हालाँकि ऐसी जीतों से निस्संदेह पड़ोसी देशों में अव्यवस्था फैलानेवाली ताकतों को बढ़ावा मिलेगा और इससे विध्वंसकारी तत्त्वों को उपद्रव भड़काने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा, जिसका वे अपने राजनीतिक लाभ के लिए शोषण किया जा सके। हमें इन ताकतों पर निगरानी रखनी होगी और अधिक सतर्क बनना पड़ेगा, क्योंकि चीन में कम्यूनिस्ट सेनाएँ दक्षिण की ओर बढ़ रही हैं। इसलिए हमारी निगाहें निस्संदेह पूर्वी और पूर्वोत्तर सीमांत पर रहनी चाहिए। संदिग्धों और ईर्ष्यालु पड़ोसियों से बचाने के लिए अपने सीमांत इलाकों को सील करने के अपने प्रयासों में ढील हम वहन नहीं कर सकते। तिब्बत आने वाले महीनों भी चिंता का एक और स्रोत बननेवाला है। चीन ने तिब्बत पर आधिपत्य का दावा कभी नहीं छोड़ा। अब तक तो राष्ट्रवादी ताकतों के पूर्व आधिपत्य तथा कम्यूनिस्टों और राष्ट्रवादियों के बीच घरेलू झगड़ों के कारण किसी तरह से तिब्बत के दक्षिण या पश्चिम की ओर विस्तार रुका हुआ है। [चीन में] राष्ट्रवादियों के कमजोर होने के साथ ही ऐसे आसार हैं कि कम्यूनिस्ट तिब्बत की ओर आँख लगाएँगे, और ऐसी सरकार स्थापित करने की कोशिश करेंगे जो या तो कम्यूनिस्टवादी हो या कम्यूनिस्टों से सहानुभूति रखती हो। किसी भी स्थिति में हालत हमारे लिए गंभीर चिंता का विषय ही हो सकती है।'' (3 नवंबर 1949)[45]

चीन की मान्यता पर सरदार पटेल

''मैंने चीन को मान्यता के प्रश्न पर आपका [नेहरू] अखबारों में बयान और टेलीग्राम देखे। ऐसा लगता है कि संयुक्त राष्ट्र संघ का अधिवेशन समाप्त होते ही आपका इरादा चीन को मान्यता दे देने का है, भले ही अन्य देश उसके लिए तैयार हों या न हों। मेरी स्वयं की सोच यह है कि इस मामले में हमें खुद आगे बढ़कर कुछ खास नहीं करना चाहिए, और मान्यता देर-सबेर दे ही दी जाएगी। अगर हम अन्य देशों के साथ इसमें कुछ देरी भी करते हैं तो कुछ हद तक यह देरी भी उपयोगी ही होगी। आखिरकार राष्ट्रमंडल अथवा संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्यों के साथ अगर हम आपसी चर्चा से काम करें, तो यह अकेले या एक-दो शक्तियों के साथ मिलकर कुछ करने से बेहतर होगा। हालाँकि अगर आपको लगता है कि हमें चीन को अन्य देशों से पहले मान्यता देनी ही चाहिए, तो मुझे लगता है

कि हमें मंत्रिमंडल में चर्चा करनी चाहिए। आखिरकार यह बहुत महत्त्वपूर्ण मामला है, अपने मंत्रिमंडलीय सहयोगियों को इस बारे में विश्वास में लेना ही उचित है।'' (13 नवंबर, 1949)[46]

सरदार पटेल की चीन के बारे में अंतिम चेतावनी

''…चीन सरकार ने शांतिपूर्ण इरादे जताकर हमें भ्रमित करने की कोशिश की है। मेरी स्वयं की सोच यह है कि इस महत्त्वपूर्ण अवधि में उन्होंने हमारे राजदूत के मन में आत्म-विश्वास की गलत भावना पैदा कर दी है कि वे तिब्बत समस्या को शांतिपूर्ण तरीकों से निपटाया जा सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस संवाददाता द्वारा कवर की गई अवधि के दौरान चीन को तिब्बत में आक्रमण करने पर ध्यान लगाना पड़ा। मेरी राय में चीन का अंतिम निर्णय एक तरह की दगाबाजी होगा। त्रासदी यह है कि तिब्बती हम पर विश्वास करते हैं; उन्होंने हमसे मार्गदर्शन लेने का निश्चय किया है; और हम चीन की कूटनीति या चीनी विद्वेष के दलदल से बाहर निकालने में असमर्थ रहे हैं। पिछली स्थिति से ऐसा लगता है कि हम दलाई लामा को बचाने में समर्थ नहीं होंगे…

…हालाँकि हम स्वयं को चीन का मित्र मानते हैं, लेकिन चीनी हमें अपना मित्र नहीं मानते। जो हमारे साथ नहीं, वह हमारे विरुद्ध है की कम्यूनिस्ट मानसिकता महत्त्वपूर्ण संकेत है जिसे हमें ध्यान में रखना चाहिए। पिछले कई महीनों में रूसी कैंप से बाहर हम संयुक्त राष्ट्र में चीन के प्रवेश के काम में और फॉरमोसा [ताइवान] के मामले में अमेरिकी आश्वासन पाने में अकेले ही सबसे आगे रहे हैं। अमेरिका, ब्रिटेन तथा संयुक्त राष्ट्र में चर्चा और पत्र-व्यवहार के जरिए चीन की भावनाओं को शांत करने के लिए, उसके डर को मिटाने के लिए, और उसके वैध दावों की रक्षा करने के लिए हमने सब कुछ किया है। इसके बावजूद चीन हमारी निष्पक्षता के प्रति आश्वस्त नहीं है; वह हम पर संदेह करना जारी रखे हैं और पूरा मनोविज्ञान, कम-से-कम बाहरी रूप से, तो संदेहवाद का ही है, जिसमें कुछ बैर की मात्रा भी मिली है। मुझे संदेह है कि चीन को अपने नेक इरादों, मित्रता और सद्भाव के प्रति आश्वस्त करने के लिए अगर हमने जो किया है, उससे कुछ और आगे बढ़ते हैं, तो…

…उनका पिछला टेलीग्राम घोर अभद्रता का कार्य था, न केवल जिस तरीके से उसमें तिब्बत में चीन की सेनाओं के प्रवेश के प्रति हमारे विरोध को बताया गया बल्कि यह भी जोर देकर कहा गया कि हमारा रवैया विदेशी प्रभाव से निर्धारित होता है। ऐसा लगता है कि ये किसी मित्र ने नहीं, बल्कि किसी दमदार शत्रु ने लिखा हो।

इसकी पृष्ठभूमि में हमें तिब्बत के लुप्त होने के परिणामस्वरूप पैदा होने वाली नई स्थिति पर विचार करना चाहिए, जैसा कि हम जानते हैं, और चीन का विस्तार हमारे द्वार तक पहुँच गया है…

…आधिपत्य के बारे में चीन की व्याख्या अलग लगती है। इस तरह हम निश्चित तौर पर यह मान सकते हैं कि जल्द ही वह उन सारे अनुबंधों को अस्वीकार कर देगा जो हमने अतीत में तिब्बत के साथ किए हैं। तिब्बत के साथ सारे सीमा संबंधी तथा व्यावसायिक समझौतों को वह खारिज कर देगा, जिन पर पिछली आधी शताब्दी से काम करते आ रहे हैं। चीन अब अविभाजित नहीं रहा। वह एकीकृत और मजबूत है। उत्तर और पूर्वोत्तर में हिमालय से सटी हमारी सीमा है जहाँ की आबादी नृवंशीय तथा सांस्कृतिक रूप से तिब्बतियों और मंगोलों से भिन्न नहीं है। सीमांत की अपरिभाषित स्थिति तथा तिब्बतियों या चीनियों के साथ सादृश्यतावाली हमारी ओर आबादी के अस्तित्व में वे सारे तत्त्व मौजूद हैं जो चीन और हमारे बीच संभावित मुसीबत बन सकते हैं। हालिया और कड़वा इतिहास हमें बताता है कि कम्यूनिजम साम्राज्यवाद के लिए किसी ढाल का काम नहीं करता और कम्यूनिस्ट लोग अन्य की तरह अच्छे या बुरे साम्राज्यवादी हैं। इस संबंध में चीन की महत्त्वाकांक्षा सिर्फ हिमालय की सिर्फ हमारे ओर की तराई तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें असम का महत्त्वपूर्ण भाग भी शामिल है।

चीन से नृवंशीय समानता तथा कम्यूनिस्ट साम्राज्यवाद पश्चिमी ताकतों के साम्राज्यवाद या विस्तारवाद से अलग है। पहले के पास विचारधारा का चोला है, जिससे वह दस गुना खतरनाक हो जाता है। विचारधारात्मक विस्तार का आवरण प्रच्छन्न नस्लीय, राष्ट्रीय या ऐतिहासिक दावों का होता है। इस तरह से उत्तर तथा पूर्वोत्तर में खतरा कम्यूनिस्ट तथा साम्राज्यवादी दोनों तरह का है। पश्चिमी तथा पश्चिमोत्तर में सुरक्षा का खतरा उसी तरह से प्रमुख बना हुआ है, जिस तरह से वह पहले बना हुआ था, साथ ही उत्तर और पूर्वोत्तर में

नया खतरा तैयार हो गया है। इस तरह, पहली बार, सदियों बाद, भारत को अपनी प्रतिरक्षा एक साथ दो मोरचों पर मजबूत करनी होगी। हमारे प्रतिरक्षा उपाय अब तक पाकिस्तान पर श्रेष्ठता के हिसाब से आधारित होते रहे हैं। हमारे आकलन के अनुसार हमें अब उत्तर और पूर्वोत्तर में कम्यूनिस्ट चीन के हिसाब से तैयारी करनी होगी। निर्धारित आकांक्षाओं और उद्देश्योंवाले कम्यूनिस्ट ने हर तरह से हमारे प्रति मित्रतापूर्ण व्यवहार को खात्मा कर दिया है…

…चलिए, संभावित सीमांत मुसीबत को लेकर राजनीतिक परिस्थितियों पर विचार करते हैं। हमारे उत्तरी तथा पूर्वोत्तर के पहुँच मार्गों में नेपाल, भूटान, सिक्किम, दार्जिलिंग और असम के जनजातीय क्षेत्र शामिल हैं। संचार के लिहाज से वे कमजोर स्थान हैं। लगातार रक्षात्मक नीति टिकाऊ नहीं होती। घुसपैठ के असीमित अवसर होते हैं। बहुत थोड़े दर्रों तक ही पुलिस सुरक्षा मौजूद है। वहाँ तो हमारी बाहरी चौकियों पर भी तैनाती पूरी नहीं है। उन क्षेत्रों से हमारा संपर्क किसी भी तरह से निकट और आत्मीय नहीं है। मेरे हिसाब से यह ऐसी स्थिति है जिसे हम असावधानी भरा या ढुलमुल तरीका नहीं अपना सकते। हमें स्पष्ट विचार रखना होगा कि हम क्या चाहते हैं और किन तरीकों से चाहते हैं। अपने उद्देश्यों को मूर्त रूप देने में या उन उद्देश्यों को पाने के लिए अपनी नीतियों में निर्णय क्षमता की कमी हमें कमजोर करेगी और इससे खतरा बढ़ेगा जिसके कि सबूत मिल रहे हैं…

…इन बाहरी खतरों के साथ-साथ हमें गंभीर आंतरिक समस्याएँ भी झेलनी पड़ रही हैं।…अब तक भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी को विदेशी कम्यूनिस्टों से संपर्क करने में, या उनसे हथियार, साहित्य आदि पाने में दिक्कत आती थी। उन्हें पूर्व में बर्मी या पाकिस्तानी सरहदों की या लंबे समुद्री रास्ते की मुसीबत झेलनी पड़ती थी। अब चीनी कम्यूनिस्टों तक पहुँचने तथा उनके जरिए अन्य विदेशी कम्यूनिस्टों तक पहुँचने के तुलनात्मक रूप से आसान उपाय हासिल हो जाएँगे। जासूसों, देशद्रोहियों और कम्यूनिस्टों की घुसपैठ अब आसान होगी। तेलंगाना, वारंगल जैसे अलग-थलग कम्यूनिस्ट गढ़ों से निपटने के बजाय हमें उत्तरी तथा पूर्वोत्तर सीमा पर कम्यूनिस्ट खतरे से निपटना होगा, जहाँ से हथियारों और गोला-बारूद की आपूर्ति होती है। हथियारों के लिए वे कम्यूनिस्ट चीन पर सुरक्षित तरीके से निर्भर कर सकते हैं…

…हमारे उपाय सही रूप से व्यापक होने चाहिए, जिसमें न केवल हमारी रक्षा, रणनीति और तैयारी की स्थिति शामिल हो, बल्कि आंतरिक सुरक्षा की समस्या से निपटना भी शामिल हो, जिसमें हमें एक भी पल की देरी नहीं करनी चाहिए। हमें सीमांत के उन कमजोर स्थानों की प्रशासनिक और राजनीतिक समस्याओं से भी निपटना होगा जिनका जिक्र मैंने पहले ही किया है।

निस्संदेह ये सारी समस्याएँ हल कर पाना असंभव हैं। हालाँकि मैं नीचे कुछ ऐसी समस्याओं के बारे में बता रहा हूँ जिनके तुरंत समाधान की जरूरत है और जिनके इर्द-गिर्द हमें अपनी प्रशासनिक और सैन्य नीतियाँ बनानी हैं और उपाय लागू करने हैं—

1. सीमांत और आंतरिक सुरक्षा, दोनों मोरचे पर चीनी खतरे का सैनिक और खुफिया मूल्यांकन।
2. अपनी सेनाओं की सैन्य स्थिति तथा जरूरत के अनुसार उनकी तैनाती की समीक्षा, खासकर महत्त्वपूर्ण रास्तों या क्षेत्रों की निगरानी से संबंधित जो विवादित हो सकते हैं।
3. अपनी सेनाओं की ताकत का मूल्यांकन, अगर आवश्यक हो तो किसी नए खतरे को देखते हुए सेना की मोरचाबंदी की योजना।
4. अपनी प्रतिरक्षा जरूरतों पर दीर्घकालीन विचार। मेरी स्वयं की सोच है कि अगर हम हथियारों, गोला-बारूद और बख्तरबंदों की सप्लाई सुनिश्चित नहीं करते हैं तो हमारी रक्षा निरंतर कमजोर ही रहेगी और हम पश्चिम और पश्चिमोत्तर तथा उत्तर और पूर्वोत्तर, दोनों तरफ के खतरों की कठिनाइयों के सामने नहीं टिक पाएँगे।
5. कोरिया युद्ध में सक्रिय भागीदारी को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र में चीन को गैरकानूनी घोषित करना संभवतया खतरा हो सकता है। इस प्रश्न पर भी हमें अपना दृष्टिकोण तय करना होगा।
6. अपने उत्तरी और पूर्वोत्तर सीमांत की मजबूती के लिए हमें राजनीतिक और प्रशासनिक कदम उठाने चाहिए। इसमें समूची सीमा अर्थात् नेपाल, भूटान, सिक्किम, दार्जिलिंग और असम के जनजातीय क्षेत्र शामिल होंगे।
7. सीमा पर आंतरिक सुरक्षा के साथ-साथ उन क्षेत्रों से लगे राज्यों, जैसे—उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल और असम में सुरक्षा

के उपाय।

8. हमारे संचार, सड़क, रेल, वायु और बेतार आदि में इन क्षेत्रों के साथ-साथ सीमांत चौकियों में सुधार।
7. ल्हासा के साथ-साथ ग्यांगत्से और यातुंग की व्यापार चौकियों पर अपने भावी मिशन, तथा तिब्बत में व्यापार मार्गों की सुरक्षा के लिए लगाई गईं सेनाएँ।
10. मैकमोहन लाइन के संदर्भ में नीति।
11. मेरा सुझाव है कि इन समस्याओं पर सामान्य चर्चा के लिए हमें जल्द बैठक करनी चाहिए और इन समस्याओं से निपटने के लिए तात्कालिक उपायों को देखते हुए अन्य समस्याओं के तात्कालिक तथा प्रत्यक्ष, त्वरित जाँच जैसे कदमों के बारे में निर्णय करें…[47]

चीन पर मंत्रिमंडल की चर्चा, नवंबर 1950: यथार्थवाद के विपरीत महत्त्वाकांक्षी सोच

''…मंत्रिमंडल की चर्चा में कुछ दरार दिखी। सरदार ने सहज ज्ञान से चीनी गतिविधि में निहित खतरे को महसूस किया। जब वे मंत्रिमंडल की बैठक से लौटे तो वे काफी उत्तेजित, चिंतित और विचारमग्न दिख रहे थे। चीनी इरादे और बयान उन्हें पूरी तरह से अविश्वसनीय लग रहे थे और उसकी योजनाओं के प्रति गहरे शंकालु थे। तिब्बत के धार्मिक गुरु दलाई लामा के प्रति भी वे बहुत आदर थे और मदद के उनके अनुरोध पर उन्होंने संवेदनशील तरीके से प्रतिक्रिया दी थी। कम्यूनिज्म की सैनिक भूमिका के कारण उससे उनकी अनिच्छा जानी-मानी थी; वे सोचते थे कि चीनी कम्यूनिज्म रूसी कम्यूनिज्म से अधिक घातक सिद्ध होगा, हालाँकि दोनों ही साम्राज्यवादी अतीत के बोझ से लदे ही नहीं, प्रेरित भी थे। उन्होंने मुझसे कहा था कि समस्या बहुत महत्त्वपूर्ण और गंभीर है और उस पर सिर्फ बातें करने से काम नहीं चलेगा, बल्कि लिखित रूप में भी उनसे निपटना पड़ेगा। प्रधानमंत्री और उनके उप-प्रधानमंत्री के रवैए में कुछ मूलभूत अंतर ऐसे थे जैसे कि विश्वास की जगह संदेह, अनुमान की जगह तथ्य, महत्त्वाकांक्षी सोच की जगह यथार्थवाद, जिनके कारण ऐसे आसार नहीं थे कि पटेल प्रधानमंत्री का मन बदल पाते, जो कि निर्णय कर चुके थे। अंत तक वे [पटेल] उसी लाइन पर डटे रहे जो उन्होंने 7 नवंबर, 1950 के पत्र में ली थी, हालाँकि उनकी ऊर्जा उनके विरोधियों के इनकार में उड़ गई।''[48]

सरदार पटेल : नेहरू को भ्रमित किया जा रहा है

''मेरी उनसे अंतिम बातचीत 15 दिसंबर, 1950 को बंबई में उनके देहांत होने से कुछ दिन पहले ही हुई थी। पटेल ने मुझे 7 नवंबर, 1950 को एक पत्र दिखाया जो उन्होंने नेहरू को लिखा था। जब मैंने पत्र पढ़ लिया तो वे कहने लगे : मैं नेहरू को पसंद करता रहा हूँ, लेकिन उन्होंने कभी उसका सही प्रत्युत्तर नहीं दिया। मैं बहुत दुखी हूँ, क्योंकि मैं सामने दिख रहे खतरे के लिए कुछ कर पाने में असमर्थ हूँ। चीन दक्षिण एशिया में अपना प्रभुत्व जमाना चाहता है। हम इस ओर से आँखें मूँदे नहीं बैठ सकते, क्योंकि साम्राज्यवाद नई शक्ल में सामने आ रहा है। उनके दरबारी उन्हें भ्रमित कर रहे हैं। भविष्य को लेकर मुझे गहरी चिंता हो रही है।''[49]

हमारी सीमाओं की सुरक्षा की अनदेखी की गई

''…हमारी सीमाओं की सुरक्षा की अनदेखी की गई, क्योंकि नेहरू का दृढ़ विश्वास था कि हमें किसी ने लड़ाई नहीं करनी है, न ही कोई हम पर आक्रमण करेगा।''[50]

सीमा सड़क बनाने की योजना—उपेक्षित

''…(तिब्बत का प्रश्न सन् 1950 में आया। तब राजाजी मंत्रिमंडल में थे और उन्होंने नेहरू की तिब्बत नीति का विरोध किया था। मैंने कहा कि चीन तिब्बत पर कब्जा करके ही संतुष्ट नहीं होगा। मैंने यह नहीं कहा था कि जब तिब्बत पर कब्जा हुआ और चीन हिमालय की चोटियों तक पहुँच गया तो हमें सैनिक काररवाई करनी चाहिए थी। हालाँकि उस समय कुछ दृढ़ता दिखाने से आज की

दुखद स्थिति से बचा जा सकता था, कम-से-कम समस्या इतनी विकट तो नहीं होती। इसी तरह से चीन की गतिविधियों को देखते हुए हमें लद्दाख में सड़कें बनानी चाहिए थीं। वास्तव में हमारे सैन्य अधिकारियों ने एक योजना पेश की थी जिसे सन् 1951-52 से लागू होना था, लेकिन उसकी उपेक्षा की गई। इसका कारण ऊपर ईश्वर को और नीचे नेहरू को ही पता होगा।''[51]

□

8

सरदार पटेल और हैदराबाद की कारर्वाई

डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने हैदराबाद कारर्वाई के लिए सरदार पटेल का समर्थन किया था।

नई दिल्ली
23 सितंबर, 1948

मेरे प्रिय सरदारजी,

मैं आज बंबई जा रहा हूँ। जैसा कि मैंने किसी दिन आपसे कहा था, मेरी बहुत इच्छा थी कि जब हैदराबाद के मसले पर निर्णय लिया जाएगा, उस समय मैं मंत्रिमंडल की बैठक में शामिल होऊँ। अगर बैठक मंगलवार से पहले होती है, तो मुझे उम्मीद है कि आप मुझे टेलीफोन पर संदेश भेजेंगे ताकि मैं तुरंत दिल्ली आ सकूँ।

…डॉ. अंबेडकर भी सोमवार तक दिल्ली लौट आएँगे।

आपका शुभेच्छु
श्यामा प्रसाद[52]

नेहरू ने पुलिस कारर्वाई का विरोध किया और सरदार पटेल का समर्थन करने के लिए डॉ. मुकर्जी से बहस की

नेहरू हैदराबाद के विरुद्ध बल प्रयोग के कितने विरोध में थे, यह मुझे श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने बताया था। उनके अनुसार पुलिस कारर्वाई का सहारा लेने के फैसले के बाद जब मंत्रिमंडल की बैठक समाप्त हुई तो नेहरू ने उन्हें बुलवाया और पुलिस कारर्वाई के लिए सरदार पटेल का समर्थन करने पर नाराजगी जताने के बाद उन्होंने चेतावनी दी कि पाकिस्तान पश्चिम बंगाल पर हमला करके बदला लेगा और कलकत्ता पर बमबारी हो सकती है। तब मुकर्जी ने जवाब दिया कि बंगाल और कलकत्ता के लोगों में इतनी देशभक्ति है कि वे तकलीफ सह लेंगे और बलिदान करेंगे तथा उन्हें यह जानकार प्रसन्नता होगी कि एक बंगाली, जे.एन. चौधरी[53] ने हैदराबाद पर जीत हासिल की है।''[54]

नेहरू गुस्से से भर गए और हैदराबाद के मसले पर सरदार को उन्होंने फटकार लगाई

''निजाम और उनके सलाहकारों की हठधर्मिता के कारण हैदराबाद की स्थिति जिस तरह से लगातार चरम पर पहुँचती जा रही थी, उसमें सरदार ने निजाम की हुकूमत को यह सलाह देना उचित समझा कि भारत सरकार का धैर्य तेजी से खत्म होता जा रहा है। इसके अनुसार, इस आशय का संदेश रियासती मामलों के मंत्रालय की ओर से वी.पी. मेनन ने भेजा।

जब जवाहरलाल नेहरू ने यह सुना तो वे बहुत अधिक नाराज हुए। जिस दिन हमारी सेना हैदराबाद जानेवाली थी, उसके एक दिन पहले उन्होंने मंत्रिमंडल की रक्षा समिति की विशेष बैठक बुलाई, जिसमें तीनों सेनाओं के अध्यक्षों को बाहर रखा गया। प्रधानमंत्री के कक्ष में हुई बैठक में जवाहरलाल नेहरू, सरदार, मौलाना आजाद, तत्कालीन रक्षा और वित्त मंत्री, रियासती सचिव वी.पी. मेनन और

रक्षा सचिव एच.एम. पटेल शामिल हुए।

चर्चा शुरू ही हुई थी कि नेहरू गुस्से में आ गए और हैदराबाद पर उनकी कारवाई तथा उनके रवैए के लिए उन पर बरसने लगे। उन्होंने वी.पी. मेनन पर भी अपना गुस्सा उतारा। उन्होंने अंत में कहा कि हैदराबाद से संबंधित सारे मामले भविष्य में वे खुद ही देखेंगे। उनके आक्रमण की तीव्रता और उसकी टाइमिंग से वहाँ मौजूद सारे लोग स्तब्ध रह गए। पूरी फटकार के दौरान सरदार बिना कुछ बोले शांत बैठे रहे। इसके बाद वे उठे और वी.पी. मेनन के साथ बैठक से उठकर चले गए। बैठक बिना किसी अन्य चर्चा के खत्म हो गई। उन्होंने [नेहरू ने] सरदार के हाथों से हैदराबाद का प्रभार लेने की धमकी पर कभी काम नहीं किया, और वे पुलिस कारवाई से संबंधित अपने कार्यक्रम पर डटे रहे। दोनों के बीच हैदराबाद के मसले पर कोई और चर्चा नहीं हुई। वी.पी. मेनन और एच.एम. पटेल, दोनों इस घटना की सच्चाई के गवाह रहे।''[55]

सरदार बोले, अब समय बरबाद करना फालतू की बात है।

सरदार से सलाह लेने मैं देहरादून गया, जो हैदराबाद से संबंधित नवीनतम घटनाक्रम से बहुत दुखी थे। वे इस बात से बहुत निराश थे कि हैदराबाद के शिष्टमंडलों से बहुत सारी निरर्थक बातचीत के बाद भी हम उनको स्वीकार्य फॉर्मूले की तलाश कर रहे हैं। उन्होंने रजाकारों द्वारा अपनी भूमि पर गाँवों में अपराध पर अपराध किए जाने का जिक्र किया। उनका पक्का विश्वास था वह स्थिति आ चुकी है कि जब हमें निजाम से स्पष्ट रूप से कह देना चाहिए कि राज्य की किसी तरह अनुचित स्वीकार्यता नहीं चलेगी और विशुद्ध उत्तरदायी सरकार भारत सरकार को स्वीकार्य होगी। सरदार ने कहा कि अब और अधिक समय बरबाद करना फालतू की बात है। वे चाहते थे कि विलय और उत्तरदायी सरकार के बारे में एक संक्षिप्त पत्र के साथ शिष्टमंडल को भेजा जाए। वे बिलकुल निश्चित थे कि किसी भी तरह की देरी से भारत सरकार राजनीतिक और सैन्य, दोनों तरह से खराब स्थिति में होगा।''[56]

सरदार पटेलः उनके [नेहरू के] सामने धैर्य रखने के अलावा हम क्या कर सकते हैं।

[स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, प्रसिद्धि नेता, सर्वाधिक सेवाकाल वाले सांसदों में से एक एन.जी.रंगा (1900–1995) सरदार पटेल और हैदराबाद कारवाई को याद करते हुए कहते हैं :]

''एक महत्त्वपूर्ण मामला जिसे वे [सरदार पटेल] गंभीरता से महसूस करते थे और जिसे प्रधानमंत्री पद के अधिकार से जवाहरलाल नेहरू बार-बार बाधा पहुँचाते रहे, वह था हैदराबाद के एकीकरण की समस्या। हालाँकि जवाहरलाल जी सहमत नहीं थे; लॉर्ड माउंटबेटन की कूटनीति से सरदार के जरूरी दखल पर अमल में देरी ही होगी। सेना को सरदार पर पूरा विश्वास है और उन्हें आश्वस्त किया है कि जब और जहाँ जरूरी होगा, रजाकार सेना पर हफ्ते भर में काबू किया जा सकेगा। हालाँकि प्रधानमंत्री ने सरदार के साथ खुले टकराव के बिना, अपनी प्रतिभा का इस्तेमाल इस तरह के अप्रिय निर्णयों में देरी के लिए किया। जब हमारे जैसे कई लोग उन पर दबाव डालते थे, जो जानते थे कि रजाकारों की हिंसा किस तरह से बढ़ती जा रही है, तो सरदार हैरानी से कहते थे, हम उनके सामने धैर्य रखने के अलावा हम और क्या कर सकते हैं? मुझसे वादा किया गया था कि सेना त्वरित और आवश्यक कदम उठाएगी और इसलिए मुझसे कहा गया कि मैं धैर्य रखूँ। इस बात को हफ्तों बीत गए। हालाँकि अब तक उन्होंने अपना मन नहीं बनाया है। बहुत कठिनाई से, अपने दिल पर बहुत बड़ा बोझ सहते हुए सरदार ने अपना तरीका अपनाया और दो दिन की मेहनत के बाद हैदराबाद रियासत का विलय भारतीय संघ में हो गया। जवाहर की निर्णय लेने की कमी से हैदराबाद के भारत में एकीकरण में बहुत देरी हुई, जबकि सरदार की कूटनीति ने छह सौ से अधिक रियासतों का भारत में विलय हो गया।''[57]

नेहरू इस तरह से हैदराबाद पहुँचे, जैसे जीत उन्हीं की हो

''...हैदराबाद में पुलिस कारवाई की सफलता से सरदार को सीमा से अधिक प्रसन्नता हुई। देश ने इस समाचार का खुलकर स्वागत किया और सरदार की प्रतिष्ठा आसमान छूने लगी। हालाँकि पंडित नेहरू ने जीत की सामान्य भावना में शामिल होने का निर्णय

किया और इस तरह से हैदराबाद जाने का निश्चय किया जैसे कि उनकी ही जीत हुई हो।''[58]

प्रधानमंत्री ने निजाम के पक्ष में दखल दिया

''...हैदराबाद की स्थिति शांत होती जा रही थी। हालाँकि हैदराबाद लॉबी अब भी प्रधानमंत्री निवास में सक्रिय थी और उनके मन में रियासत मंत्रालय ही घूम रहा था। हैदराबाद में मुसलिमों की स्थिति का मुद्दा किसी-न-किसी रूप में लगातार सामने आ रहा था। कई बार ऐसा लगता है कि रजाकारों और सांप्रदायिक हिंसा के शिकारों की तुलना में सत्ताच्युत मुसलिमों के प्रति अधिक सहानुभूति है। वास्तव में यह अजीब लेकिन सत्य है कि प्रधानमंत्री ने कई बार निजाम और शासक परिवार के पक्ष में दखल दिया।''[59]

नेहरू ने सरदार की हैदराबाद यात्रा के दौरान सुरक्षा खर्च पर प्रश्न उठाए

''...प्रशासन को उनकी यात्रा के लिए सुरक्षा के व्यापक प्रबंध करने पड़े थे। [पटेल की हैदराबाद यात्रा] प्रधानमंत्री निवास में हैदराबाद लॉबी ने यह मुद्दा उठाया और भारी खर्चा इसमें शामिल हुआ। प्रधानमंत्री ने इस मामले में काररवाई करने में देर न करते हुए तुरंत सरदार को इस बारे में लिख दिया। सरदार ने जवाब दिया कि यह हैदराबाद प्रशासन का मामला था, और इससे उन्हें कुछ लेना-देना नहीं था तथा पंडित नेहरू की हैदराबाद यात्रा पर उससे भी कहीं अधिक खर्चा हुआ था। यह कुछ और नहीं, बल्कि पंडित नेहरू की अतिशयोक्तिपूर्ण भावनात्मक प्रतिक्रिया थी जिसमें व्यावहारिक बातों पर नहीं सोचा गया था।[60]

सरदार की चेतावनी खारिज की गई

अगर जवाहरलाल की चलती तो निजाम का हैदराबाद अलग ही रहता और भारत की कोख में एक और पाकिस्तान बन जाता, जो कि दक्षिण को उत्तर से अलग करनेवाला इरादतन शत्रु राष्ट्र होता। हालाँकि पुलिस की काररवाई की सफलता के बाद हैदराबाद की स्वतंत्रता का श्रेय लेने के लिए वहाँ पहुँचनेवालों में नेहरू सबसे पहले थे!

हालाँकि शेख अब्दुल्ला के प्रभाव में रहे जवाहरलाल नेहरू ने सरदार के रियासती मामलों के मंत्रालय से जिस कश्मीर का विभाग अलग करके अपने पास रखा था, वह कभी ऐसी समस्या नहीं बनता जैसा कि वह बना है।

हालाँकि तिब्बत के प्रश्न पर जवाहरलाल नेहरू द्वारा सरदार की सलाह को खारिज करने पर हमें भारत और चीन के बीच एक बफर स्टेट मिल गया होता। सरदार अपनी विचित्र दूरदृष्टि के कारण सन् 1950 में ही पूर्वोत्तर सीमा पर होनेवाली अनहोनी और उस दिशा में हमारी विदेश नीति के खतरनाक परिणामों को समझ पा रहे थे...[61]

□

9

सरदार पटेल, पाकिस्तान तथा जम्मू और कश्मीर

हम कश्मीर की एक इंच जमीन नहीं देंगे

''....जब लड़ाई चल रही हो तो वैसे में कोई जनमत संग्रह कैसे कराया जा सकता है? अगर हमें आखिरकार तलवार के दम पर ही कश्मीर को बचाना है तो जनमत संग्रह की क्या गुंजाइश बचती है? मैं एक चीज स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि हम कश्मीर क्षेत्र का एक इंच भी किसी को नहीं देंगे।''[62]

सरदार पटेल : मेरा स्वयं का मानना है कि हमें संयुक्त राष्ट्र कतई नहीं जाना चाहिए था

''....मेरा स्वयं का मानना है कि हमें संयुक्त राष्ट्र कतई नहीं जाना चाहिए था और संयुक्त राष्ट्र जाते समय अगर हमने समय पर काररवाई की होती, तो हम पूरा मामला कहीं बहुत जल्दी और अपने नजरिए से संतोषजनक तरीके से निपटा चुके होते, जबकि संयुक्त राष्ट्र में मामला न केवल लटक गया, बल्कि हमारा मामला भी पावर पॉलिटिक्स में चक्कर में पड़कर बुरी तरह से खराब भी हो गया।''[63]

सरदार पटेल : हमें वह समस्या भी हैदराबाद की तर्ज पर ही सुलझानी चाहिए

''....कश्मीर का प्रश्न अब संयुक्त राष्ट्र के सामने है। अगर पाकिस्तान को संयुक्त राष्ट्र का सुझाया हल मंजूर करने की इच्छा नहीं है, तो उसे ऐसा करने दीजिए। हम चिंता नहीं करते, लेकिन तब हमें वह समस्या उसी तरह से निपटानी चाहिए, जिस तरह से हमने हैदराबाद की समस्या सुलझाई थी। अगर ऐसे में पाकिस्तान से हमारी लड़ाई भी होती है, तो हम उसे दुर्भाग्यपूर्ण मानेंगे लेकिन डरेंगे नहीं।'' [4 नवंबर, 1948 को नागपुर में भाषण][64]

[नोट : मणिबेन पटेल और जी.एम. नांदुरकार की टिप्पणी : ''सरदार कश्मीर मसले को संयुक्त राष्ट्र में ले जाने और इसे बाहरी मामला मानने के इच्छुक नहीं थे। हालाँकि तब नेहरू लॉर्ड माउंटबेटन के प्रभाव में थे और फरियादी थे—जिन्हें पाकिस्तान को मित्र बनाने की उम्मीद करनेवाले एंग्लो-अमेरिकन समूह के षड्यंत्र द्वारा आक्रमण का शिकार होते हुए भी आरोपी बना दिया गया था।'']][65]

सरदार पटेल संयुक्त राष्ट्र में भेजे जाने के सख्त खिलाफ थे

''जहाँ तक कश्मीर का संबंध था, जवाहरलाल नेहरू माउंटबेटन के दबाव में संयुक्त राष्ट्र में उसके प्रश्न को ले जाने के लिए सहमत हो गए। गवर्नर जनरल के सुझावों पर ही बातचीत और मध्यस्थता हुई। कश्मीर पर आक्रमण के दिनों में उन्होंने नेहरू से आग्रह किया कि वे उनके साथ जिन्ना और लियाकत से मिलने लाहौर चलें। पटेल ने स्पष्ट शब्दों में विरोध किया, ''मजबूत पक्ष और सही होते हुए भी प्रधानमंत्री के जिन्ना के पास रेंगते हुए जाने के लिए भारत की जनता कभी माफ नहीं करेगी।''

नेहरू लाहौर नहीं गए तो उसका एक बड़ा कारण वल्लभभाई का विरोध भी था, हालाँकि कारण उन्होंने बीमारी का बताया था। पटेल संयुक्त राष्ट्र में मुद्दा ले जाए जाने के कड़े विरोध में थे और जमीनी स्तर पर समय पर काररवाई के पक्ष में थे, लेकिन कश्मीर

अब जवाहरलाल का बच्चा बन चुका था और···जब नेहरू ने संयुक्त राष्ट्र जाने के निर्णय की घोषणा की तो वल्लभभाई ने अपने सुझाव पर जोर नहीं दिया। जवाहरलाल ने महात्मा से भी अनिच्छुक सहमति हासिल कर ली लेकिन तब तक गांधी जी ने भारत की संयुक्त राष्ट्र में शिकायत की भाषा में बदलाव करवा दिया था। कश्मीर के भारत या पाकिस्तान में विलय के अलावा स्वतंत्र रहने का संदर्भ उसमें से हटवा दिया गया था।

भारत ने संयुक्त राष्ट्र से सहायता की माँग की तो पटेल की आशंकाएँ सच साबित हुईं। भारत की शिकायत पर पाकिस्तान ने प्रत्यारोपों की लंबी झड़ी लगा दी। जूनागढ़ और मुसलिमों के सामूहिक नरसंहार के भारत पर आरोप लगाए गए। ब्रिटिश प्रतिनिधियों की राय पर चलते हुए सुरक्षा परिषद् की धारणा ऐसी दिखी जैसे पाकिस्तान का पक्ष भारत से मजबूत हो। कश्मीर खाली कराने का प्रश्न कश्मीर को लेकर घटते-बढ़ते रहनेवाले भारत-पाकिस्तान विवाद में बदल गया।''[66]

नेहरू ने विशेष प्रावधान का पक्ष लिया, सरदार पटेल पूर्ण एकीकरण चाहते थे।

नेहरू ऐसा अनुच्छेद लाने के पक्ष में थे जिससे जम्मू और कश्मीर तथा राष्ट्र के बीच विशेष संबंध स्थापित हो, इस प्रकार भारतीय संघ के अंदर राज्य को अपना संविधान बनाने के अधिकार दिए जाने का अनुमान लगाया गया। पटेल राज्य का संघ में पूर्ण एकीकरण चाहते थे। इस मुद्दे पर मंत्रिमंडल की राय विभाजित थी और संविधान सभा का रुझान सरदार के पक्ष में था। हालाँकि जब मामला संविधान सभा में आया तो पटेल ने सरकार की एकता और एकजुटता को सबसे अधिक तरजीह देते हुए नेहरू के फॉर्मूले का समर्थन कर दिया।[67]

सरदार पटेल जम्मू और कश्मीर में विशेष प्रावधान के विरुद्ध थे

''···संविधान सभा की सामान्य राय को जम्मू और कश्मीर राज्य की विचित्र स्थितियों से निपटने के प्रस्तावों से धमकाया गया और वह स्थिति किसी और ने नहीं, बल्कि दुर्जेय माने जानेवाले शेख अब्दुल्ला ने ही पैदा की थी।···[एक विदेशी दौरे पर] जाने से पहले गोपालस्वामी आयंगर ने पंडित नेहरू के साथ स्थिति पर विस्तृत चर्चा की थी। उन्होंने कुछ ऐसे प्रावधानों का ड्राफ्ट तैयार किया था जिन्हें शेख अब्दुल्ला ने स्वीकार किया था और वे अब संविधान सभा की कांग्रेस पार्टी के सामने रखे जाने थे। पार्टी में एक बड़ा समूह जम्मू और कश्मीर तथा भावी भारतीय संघ के अन्य राज्यों के बीच किसी भी तरह के भेदभाव के सुझाव पर सवाल उठा रहा था···सरदार स्वयं भी उस राय के पक्ष में पूरी तरह से थे, लेकिन अपने ही ढंग से समस्याओं को हल करनेवाले पंडित नेहरू और गोपालस्वामी आयंगर की बात न काटने की अपनी सामान्य नीति के तहत उन्होंने अपने विचार अपने तक ही रखे। वास्तव में उन्होंने प्रारूप प्रस्ताव तैयार करने में हिस्सा तक नहीं लिया और उन प्रस्तावों के बारे में उन्होंने सुना भी तभी, जब गोपालस्वामी आयंगर ने कांग्रेस पार्टी में उसकी घोषणा की। घोषणा का चारों तरफ से भारी विरोध हुआ और गोपालस्वामी एकमात्र प्रभावहीन समर्थक मौलाना अबुल कलाम आजाद के साथ एकदम अकेले पड़ गए···बाद में शाम को सरदार के पास गोपालस्वामी का फोन आया और उन्होंने कांग्रेस के सामने पेश प्रस्ताव तैयार करने की स्थिति के बारे में समझाया। उन्हें लगा कि सिर्फ सरदार ही दखल देकर स्थिति को सँभाल सकते हैं और उन्होंने सरदार से उनके बचाव में आने की अपील की···

शेख अब्दुल्ला इस पूरी बहस से अलग रहे। मैंने उतनी हंगामेदार बैठक कभी नहीं देखी।···गोपालस्वामी के फॉर्मूले [विशेष प्रावधान] के विरोध में राय तीव्र और आक्रामक थी, और यह मुद्दा संविधान सभा की संप्रभुता तक भी पहुँच गया कि कश्मीर राज्य संविधान सभा के बिना ही संविधान का निर्माण कर लिया जाए। ऐसी स्थिति में मौलाना आजाद हो-हल्ला मचाकर सबको बोलने से रोकने लगे। बहस को पटरी पर लाने का काम सरदार पर छोड़ा गया और अनुरोध किया गया कि अंतरराष्ट्रीय बाध्यताओं के कारण एक अस्थायी दृष्टिकोण ही अपनाया जाए और अंतिम संबंध का प्रश्न जरूरत के हिसाब से बाद में हल किया जाएगा। आखिरकार यह विचार माना गया और गोपालस्वामी का प्रारूप कुछ जरूरी सुधारों के बाद स्वीकार कर लिया गया।''···[68]

सरदार पटेल ने धारा 370 के अस्थायी स्वरूप की ओर इशारा किया

''उन्होंने [सरदार पटेल ने] कहा कि आखिरकार न तो शेख अब्दुल्ला और न ही गोपालस्वामी स्थायी हैं। भविष्य भारत सरकार की शक्ति और साहस पर निर्भर करेगा और अगर हमें अपनी स्वयं की शक्ति पर विश्वास नहीं है तो हमें एक राष्ट्र के रूप में बने रहने का कोई अधिकार नहीं है।''[69]

एच.वी. कामथ : सरदार उद्देश्यपूर्ण तरीके से कश्मीर से निपटना चाहते थे

सरदार पटेल ने एक बार काफी उदास स्वर में मुझसे कहा था कि काश, जवाहरलाल और गोपालस्वामी आयंगर ने कश्मीर को मेरे गृह और रियासती मंत्रालय से अलग करके अपने पास न रखा होता, तो वह इस मुद्दे का उतने ही उद्देश्यपूर्ण ढंग से हल निकाल देते जैसा कि उन्होंने हैदराबाद समस्या के लिए किया था। यह खेद की बात है कि नेहरू ने चीन के बारे में उनकी चेतावनी पर ध्यान नहीं दिया···[70]

एन.वी. गाडगिल : नेहरू कश्मीर मसले पर मजबूत निर्णय लेने में असफल रहे

''आज पाकिस्तान हमारे दोनों सीमांत पर ताकतवर दुश्मन बन चुका है। पूरे कश्मीर को न मिलाने की गलती की वजह से पाकिस्तान को गिलगिट के रास्ते से चीन से मिलने और हमारे हितों के खिलाफ साजिश रचने का मौका मिल सका। मुझे दु:ख के साथ यह कहना पड़ रहा है कि जब कभी मैंने पाकिस्तान से संबंधित कोई प्रस्ताव रखा, नेहरू ने इस तरह से जताया जैसे मैं मुसलमानों का दुश्मन हूँ। मैंने उन पर हमेशा कश्मीर के मसले पर ठोस निर्णय लेने का दबाव डाला और कहा कि हम सब आपके साथ हैं। नेहरू कहा करते थे कि राजनीति को हमेशा लचीला होना चाहिए। मैं कहता था कि अगर वे ठोस निर्णय नहीं लेंगे तो उन्हें अपनी गलती स्वीकार करने तक का समय नहीं मिलेगा।''[71]

पाकिस्तान के साथ विवाद के मुद्दों पर सरदार दृढ़ जिद्दी थे

''स्वभाव की दृष्टि से पाकिस्तान के विवाद के मुद्दों पर सरदार दृढ़ और जिद्दी थे। इसमें भी कोई संदेह नहीं है कि सरदार के रवैए में एक तरह का लड़ाकूपन भी छिपा था; हालाँकि लड़ाकूपन युद्धपिपासा या झगड़ालूपन का पर्याय नहीं है, लेकिन वे महसूस करते थे कि पाकिस्तान सिर्फ यही भाषा समझता है। पाकिस्तान की नीतियों पर कुछ भ्रम का भी इस पर असर था।''[72]

□

10

सरदार पटेल और जवाहरलाल नेहरू स्वभाव और रवैए में अंतर

सरदार पटेलः मानसिक प्रताड़ना की दर्दनाक प्रक्रिया

''मानसिक प्रताड़ना की इस प्रक्रिया को लंबा खींचना दर्दनाक है और हमें इसे अभी समाप्त करना होगा, क्योंकि मुझे [नेहरू से मतभेदों तथा नेहरू के उन पर गुस्सा करने को लेकर] कोई उम्मीद नहीं दिखती''उनका रास्ता सुचारु बनाने के लिए मैं अधिकतम हद तक जा चुका हूँ, लेकिन मैंने पाया कि वह सब बेकार है, और हम इसे सिर्फ ईश्वर पर ही छोड़ सकते हैं...''(सरदार पटेल का सी. राजगोपालाचारी को 13.10.1950 को लिखा पत्र)[73]

सरदार पटेलः हो सकता है मैं सठिया गया हूँ और किसी काम का न रहा।

पूज्य बापू,

आज सुबह सात बजे मुझे काठियावाड़ जाना है। आपको उपवास करते छोड़कर जाना असहनीय तकलीफदेह है, लेकिन कठोर कर्तव्य में और कोई चारा नहीं होता।

कल आपके दुःख ने मुझे बेचैन कर दिया। मैं क्रोधावेश में सोचने पर मजबूर हो गया।

काम का बोझ इतना बढ़ गया है कि मैं दबा जा रहा हूँ। अब मुझे लगता है कि इस तरह से चलाना न तो देश के हित में है और न मेरे हित में। उलटे यह नुकसानदेह हो सकता है।

जवाहर पर तो मुझसे भी ज्यादा भार है। उनका हृदय दुःख से बोझिल है। हो सकता है, मैं सठिया गया हूँ और उनके साथ काम करने और उनका बोझ कम करने लायक नहीं बचा। मौलाना (आजाद) भी मेरे कामों से अप्रसन्न हैं और आपको बार-बार मेरा बचाव करने के लिए खड़ा होना पड़ता है। यह मेरे लिए भी असहनीय है।

इन परिस्थितियों में मेरे और देश के लिए यही बेहतर होगा कि अब आप मुझे जाने दें। मैं जो कर रहा हूँ, उसके विपरीत नहीं जा सकता। और जिन लोगों के साथ मैंने आजीवन काम किया है, अगर मैं उनके लिए बोझ और आपके लिए आफत बन गया हूँ, और इसके बाद भी मैं पद से चिपका रहूँ, तो कम-से-कम मेरी निगाह में तो इसका अर्थ होगा कि मैं सत्ता का लालची हूँ और पद छोड़ने का इच्छुक नहीं हूँ। इस असहनीय स्थिति से आप मुझे शीघ्र निकाल दें...(13 जनवरी, 1948)[74]

नेहरू ने स्वभावगत मतभेद, आर्थिक और सांप्रदायिक मसलों पर मतभेद स्वीकार किए

''...यह सही है कि सरदार और मेरे बीच स्वभावगत मतभेद ही नहीं, बल्कि आर्थिक और सांप्रदायिक मसलों को लेकर भी मतभेद हैं। ये मतभेद लंबे समय से चले आ रहे हैं, यहाँ तक कि जब हम कांग्रेस में साथ काम कर रहे थे, तब से हैं। यद्यपि, इन मतभेदों के बावजूद, हमारे बीच बहुत कुछ समान है और काफी अधिक आपसी आदर और प्रेम है। मोटे तौर पर कहा जाए तो स्वतंत्रता का समान राष्ट्रीय राजनीतिक उद्देश्य है। सालों से एक-दूसरे के साथ काम करते रहने के कारण हमने एक-दूसरे को बहुत अधिक इसी रूप में

स्वीकार कर लिया है। अगर कांग्रेस कोई निर्णय लेती है, तो हम उसे स्वीकार करते हैं, भले ही उसके क्रियान्वयन को लेकर मतभेद हों…।[75]

सरदार पटेल ने महत्वपूर्ण मुद्दों पर मतभेद होना स्वीकार किया

''जवाहरलाल ने जो नोट आपको भेजा है, उसकी प्रति मेरे पास आई है। मैंने उसे ध्यान से पढ़ा है।

स्वभावगत और आर्थिक मामलों पर, और हिंदू-मुसलिम संबंधों को प्रभावित करनेवाले मुद्दों पर किसी तरह की असहमति नहीं है। हम दोनों ही देश के हितों को व्यक्तिगत मतभेदों से ऊपर रखते हैं, और एक-दूसरे के प्रति आदर, सम्मान और स्नेह रखते हैं तथा समान परिश्रम से मिलकर काम करते आए हैं। संयुक्त प्रयासों के दौरान हमारे सामने कई कठिनाइयाँ आईं जिन्होंने हमें घेरा, और इन मतभेदों के बावजूद, हमने उन कठिन परिस्थितियों को पार किया जो किसी भी सरकार या देश के लिए मुश्किल हो सकती हैं। यह तकलीफदेह और कुछ दुखद भी है कि हम इसे आगे जारी नहीं रख पा रहे''…[76]

जनता के गुस्से से डरकर नेहरू ने सरदार से मदद माँगी

[श्यामा प्रसाद] मुकर्जी की कोलकाता की विजयी वापसी, समझौता [नेहरू-लियाकत] और नेहरू के विरोध में अखबारों की प्रतिक्रियाओं और जनता के कड़े विरोध से दिल्ली में सरकार घबरा गई। आशंका व्यक्त की गई कि अगर पंडित नेहरू पश्चिम बंगाल को समझौता बेचना चाहते हैं, जैसा कि अनुमान लगाया जा रहा था, तो उनका कड़ा विरोध होगा और उनके स्वयं के खिलाफ हिंसा तक हो सकती है। हालत यह हो गई थी कि गोपालस्वामी आयंगर ने प्रधानमंत्री से कहा कि कलकत्ता जाने के लिए सरदार को तैयार करें। इसके अनुसार, एक दिन सुबह पंडित नेहरू सरदार से मिलने पहुँचे। [सरदार के स्वास्थ्य को अब तक एक और झटका लग चुका था] पूर्वी बंगाल से विदाई से संकट और गहरा गया तथा उनके और पंडित नेहरू के बीच तनाव की स्थिति ने उनके स्वास्थ्य को और खराब कर दिया; न केवल उन्हें ठीक होने में देरी होने लगी, बल्कि उनकी हालत और खराब होने लगी। जिस दिन पंडित नेहरू उन्हें [पटेल को] देखने आए, उनकी नब्ज 90 से कुछ अधिक थी और वे कमजोरी महसूस कर रहे थे। पंडित नेहरू ने हिचकते हुए अपना प्रस्ताव रखा। सरदार ने उन्हें अपनी सेहत के बारे में बताया और सुझाव दिया कि वे खुद ही चले जाएँ। पंडित नेहरू ने उत्तर दिया कि सामान्य धारणा यह है कि अगर वे गए तो उन पर पथराव होगा। उन्होंने कहा कि ऐसे स्वास्थ्य की स्थिति में उन्हें इस बात के लिए दबाव डालते हुए बड़ा दु:ख हो रहा है, लेकिन उन्हें कोई अन्य विकल्प नहीं दिख रहा है क्योंकि श्यामाप्रसाद मुकर्जी समझौते के खिलाफ जनमत तैयार कर रहे हैं और सरदार ही उनका प्रभावशाली जवाब दे सकते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि वे महसूस करते हैं कि कलकत्ता में अप्रैल में मौसम सही नहीं रहता, हालाँकि उन्होंने उम्मीद जताई कि मौसम उन पर इतनी निर्दयता नहीं दिखाएगा।

वे जानते थे कि उनके स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ेगा, और मध्य अप्रैल में कलकत्ता के खराब मौसम की भी उन्हें जानकारी थी, लेकिन इसके बावजूद सरदार ने कलकत्ता जाने और समझौते के विरोध में बने माहौल को पक्ष में बदलने का भयंकर दायित्व स्वीकार करने पर सहमति दे दी।''[77]

मानसिक पीड़ा के कारण सरदार का शारीरिक स्वास्थ्य भी बिगड़ गया

''सरदार और पंडित नेहरू के बीच संबंध तनावपूर्ण बने रहे। सरदार अपने गिरते स्वास्थ्य के कारण अधिक-से-अधिक समय अपने घर में ही सीमित रहते। दवाएँ कारगर नहीं हो रही थीं; उनकी नब्ज बढ़ रही थी और वे कमजोरी महसूस कर रहे थे। कोई संदेह नहीं था कि मानसिक पीड़ा के कारण उनके शरीर पर भी तेजी से असर पड़ रहा था।''[78]

नेहरू ने सरदार से रियासती मंत्रालय लिया

''सरदार को पंडित नेहरू का पत्र मिला जिसमें उन्होंने उनके स्वास्थ्य के बारे में चिंता जताई थी और उम्मीद की थी कि [मुंबई

के] बदलाव से उन्हें लाभ होगा। पत्र में उन्होंने यह भी कहा था कि सरदार को अपने विभागीय काम नहीं देखने होंगे, बल्कि रियासती मंत्रालय गोपालस्वामी आयंगर देखेंगे और गृह मंत्रालय वे खुद देखेंगे। मैं अच्छी तरह से जानता था कि इस व्यवस्था से सरदार को वर्तमान स्वास्थ्य की स्थिति में दु:ख पहुँचेगा और उनका हृदय कमजोर हो जाएगा तथा गुर्दों पर भी असर पड़ेगा, इसलिए मैंने मणिबेन से सलाह करके उन्हें यह पत्र न दिखाने का निश्चय किया। मुझे विश्वास था कि ऐसा करके मैंने सरदार को पंडित नेहरू के व्यवहार से होनेवाली भावनात्मक पीड़ा और दु:ख से बचा लिया है, वरना उनकी हालत और बिगड़ जाती।''[79]

नेहरू व्यक्तिगत पसंद और नापसंद को अधिक महत्व देते थे।

''मैं स्पष्ट रूप से कहता हूँ कि नेहरू सरदार की तुलना में व्यक्तिगत पसंद और नापसंद को अधिक महत्त्व देते थे और उनकी तुलना में अधिक हठी थे।''[80]

सरदार पटेल की मृत्यु पर नेहरू का विचित्र व्यवहार

''जब बंबई में सरदार की मृत्यु हुई, तो जवाहरलाल ने मंत्रियों और सचिवों को उनके अंतिम संस्कार में भाग लेने के लिए बंबई न जाने का निर्देश जारी किया। मंत्रियों में उस समय मैं मैथेरन (बंबई के पास) में था। श्री एन.वी. गाडगिल, श्री सत्यनारायण सिन्हा और श्री वी.पी. मेनन ने निर्देश को नहीं माना और अंत्येष्टि में शामिल हुए। जवाहरलाल ने डॉ. राजेंद्र प्रसाद से भी बंबई न जाने का आग्रह किया, जो कि विचित्र अनुरोध था, जिसे राजेंद्र प्रसाद ने नहीं माना। अंत्येष्टि में मौजूद अन्य महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों में डॉ. राजेंद्र प्रसाद, राजाजी और पंतजी (गोविंद वल्लभ) थे और निस्संदेह मैं भी था।''[81]

सरदार की अंत्येष्टि में लोगों को न पहुँचने देने के प्रयास किए गए

हमें बार-बार दिल्ली से संदेश आ रहे थे और हम यह जानकर बहुत दुखी थे कि लोगों को सरदार पटेल की अंत्येष्टि में पहुँचने से रोकने के लिए बंबई न जाने देने के प्रयास किए जा रहे थे। हमसे बताया गया कि मंत्रियों को भी रोका गया और जिन राज्यपालों ने पूछा, उनसे भी अपनी जगह बैठे रहने को कहा गया। स्पष्ट रूप से यह पंडित नेहरू के संसद् में दिए गए भाषण की धारा के अनुरूप ही था, जिसके अंश निम्नानुसार थे—

''इस अवसर पर मैं कुछ और कह सकता हूँ। मेरे सहयोगी श्री राजगोपालाचारी और मैं तुरंत ही उन्हें अंतिम श्रद्धांजलि देने बंबई जा रहे हैं। मैं समझता हूँ कि राष्ट्रपति ने भी तुरंत बंबई जाने का निर्णय किया है, और अध्यक्ष महोदय आज सुबह ही निकल गए हैं। मुझे कोई संदेह नहीं है कि मेरे कई सहयोगी और इस सदन के माननीय सांसदगण उन्हें श्रद्धांजलि देना चाहते हैं, लेकिन मुझे लगता है कि वे जिस तरह के शानदार कार्यकर्ता थे, वे यह पसंद नहीं करते कि हम अपना काम छोड़कर ऐसे में बड़ी संख्या में बंबई पहुँच जाएँ। इसलिए मैंने अपने सहयोगियों से कहा है कि वे यहीं रुकें, सिवाय श्री राजगोपालाचारी के, जो यहाँ हम सारे लोगों में शायद सरदार पटेल के सबसे पुराने सहयोगी और मित्र रहे हैं।''[82]

सरदार पटेल कांग्रेस की सेहत और प्रवृत्ति के प्रति बेहद चिंतित थे

''...मैं कुछ बातें स्पष्ट रूप से कहने जा रहा हूँ कि मुझे यह देखकर दु:ख होता है कि स्वतंत्रता संग्राम के समय हम लोगों में देखी जानेवाली सेवा, बलिदान और उच्च नैतिक मानदंड की भावना, स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद गायब होती जा रही है और भारत नीचे जा रहा है। लोगों को यह समझना ही होगा कि लोग और कांग्रेस जिस लक्ष्य के लिए लंबे समय से लड़ते रहे हैं, वह विदेशी शासन के हटाने भर से हासिल नहीं हुआ है। स्वतंत्रता को लाभकर बनाने के लिए कई चीजें अभी हासिल करना जरूरी है। स्वतंत्रता हासिल होते ही लोग सत्ता की राजनीति में फँस गए और नेतृत्व की छीना झपटी में उलझ गए। उन्हें इसकी परवाह नहीं है कि वे देश को कितना बेहिसाब नुकसान पहुँचा रहे हैं। निश्चित ही स्वतंत्रता इस पतन के लिए हासिल नहीं की गई थी!...[बिहार के शीरा घोटाले के संदर्भ

में]···शीरा घोटाले में शामिल लोग अगर दोषी पाए जाते हैं, तो उनके साथ कड़ाई से निपटा जाना चाहिए। (26 जनवरी, 1948, पटना)[83]

सरदार पटेल ने कहा कि उनके पास सोचने की तुलना में बोलने की अधिक क्षमता है

''मैंने इस तथ्य का उल्लेख किया है कि उन्होंने [सरदार पटेल ने] एक अनुशासित संगठन का निर्माण और संरक्षण किया है, जिसने कुल मिलाकर उनकी माँगों के अनुरूप अच्छी तरह से काम किया है। उन्होंने कमोबेश यही बात कही है, तुम उन्हें इतना नहीं जानते, जितना कि मैं जानता हूँ। मैंने पिछले करीब तीस सालों से उन्हें देखा है और उनका अध्ययन किया है। जब तक उन्हें ठीक लगता है, वे आपकी सराहना करेंगे और आपका अनुसरण करेंगे। जब आप वहाँ नहीं रहते, या आप पद से हट जाते हैं, तो वे आपकी ओर से मुँह मोड़ लेते हैं। उनके पास सोचने की तुलना में बोलने की अधिक क्षमता है। इस संदर्भ में मैं कहूँगा कि किस तरह से लोग गांधीजी को पहले ही भुला चुके हैं और अपना मतलब साधने के लिए उनके नाम का इस्तेमाल करते हैं।''[84]

उन्होंने अपने और प्रधानमंत्री के बीच मतभिन्नता को दिल पर लिया था

''एक बार मैं दिल्ली में उनके घर गया। मैंने उन्हें एक ऑक्सीजन टेंट के नीचे लेटे देखा। मैं दरवाजे पर खड़ा सिगरेट पीता रहा। जब सरदार को मेरे आने का पता चला तो उन्होंने डॉक्टर से टेंट हटाने को कहा और मुझसे पूछा कि मैं इस तरह से गलियारे में क्यों खड़ा हूँ। मैंने उन्हें बताया कि मैं धुएँ से वहाँ की हवा को दूषित नहीं करना चाहता। उन्होंने अपनी विशिष्ट शैली में जवाब दिया—

मेनन, आप इसकी चिंता क्यों करते हैं? पूरी दिल्ली की हवा दूषित है। उनकी टिप्पणी में कुछ कड़वाहट थी। उन्होंने अपने और प्रधानमंत्री के बीच मतभिन्नता को दिल पर लिया था और ऐसे लोग नहीं थे जो कहानियाँ बनाते हों···अगर सरदार जीवित होते तो वे हमें कई ऐसी दिक्कतों से बाहर निकलने की राह दिखाते, जो उनकी मृत्यु के बाद हमारे सामने आई हैं···[85]

अपने देश को महान् देखने का मेरा जोश उम्र के साथ कम नहीं हुआ!

''आज···मुझे भविष्य में विश्वास है, यह आत्म-निर्भरता की भावना पर आधारित है। हालाँकि अगर मैं समझ और चिंता की भावना को स्वीकार न करूँ, तो मैं अपने आपके प्रति सच्चा नहीं होऊँगा। हमारे प्रशासन और सार्वजनिक मामलों में निश्चित रुझान और विकास मेरे हृदय में बेचैनी और उदासी भर देते हैं। देश उस व्यक्ति की भावना समझ सकता है, जो अपने सार्वजनिक जीवन के बड़े हिस्से में बलिदान और निस्वार्थता की घटनाएँ तथा अनुशासन और एकता के कर्म देखे हों, और जो अब उन कार्यों को परिदृश्य से गायब होते देख रहा हो।

हमारा सार्वजनिक जीवन ठहरे हुए पानी के दलदल में बदलता लग रहा है; हमारी चेतना सुधार की संभावनाओं में संदेह और निराशा में फँसी हुई है। हम इतिहास या अनुभव से कुछ लाभ लेते नहीं दिखते। हम असहाय होकर देख रहे हैं कि समय हमारी फसल का बड़ा हिस्सा काटे ले जा रहा है, और पीछे सिर्फ ठूँठ पड़े दिख रहे हैं।

हालाँकि हमारे सामने जो काम हैं, वे हमेशा की तरह जटिल और भारी हैं। उनके लिए निष्पक्ष संसाधनों का इस्तेमाल और हमारे सर्वोत्तम प्रयास चाहिए। हम फालतू के कार्यों में बहुत अधिक समय लगाते हैं और जरूरी कार्यों में बहुत कम समय देते हैं। हम बात करते रहते हैं, जबकि बड़ी जरूरत काम की है। हम दूसरों के कामों की आलोचना करते हैं, लेकिन खुद कुछ करते नहीं। हम छलाँग लगाकर दूसरों को पीछे छोड़ना चाहते हैं जबकि हमने चलना ही मुश्किल से सीखा है।

स्वतंत्र देश के रूप में अपने कैरियर के तीसरे पड़ाव पर अगर मैंने अंदर प्रकाश डालने की कोशिश की है तो मुझे उम्मीद है कि देशवासी मुझे क्षमा करेंगे। अपने जीवन में अब मैं उस चरण पर पहुँच चुका हूँ जब समय बहुत कीमती हो गया है। अपने देश को महान् देखने और हमारी स्वतंत्रता का आधार अच्छा और मजबूत सुनिश्चित करने का मेरा जोश उम्र के साथ कम नहीं हुआ! मातृभूमि की शांति, समृद्धि और उन्नति की मेरी लालसा शारीरिक कमजोरी के कारण कम नहीं हो पाई है।[86] (15 अगस्त, 1950)

''हम कैसे कहें, काश आज सरदार हमारा नेतृत्व करने के लिए जीवित होते''

''कश्मीर पर संयुक्त राष्ट्रसंघ में निराशाजनक विवादों के चलते कश्मीर पर संयुक्त राष्ट्रसंघ में उलझनों से सरदार द्वारा इनकार करने में उनकी बुद्धिमत्ता को महसूस करने में हमें 15 साल लग गए। सरदार के कहने के बावजूद एक याचिकाकर्ता के रूप में हम संयुक्त राष्ट्र क्यों गए? क्या हैदराबाद के मामले में राष्ट्र के विचार से आत्मनिर्भर होने से हमें बहुत अधिक लाभ नहीं मिला? इसमें आश्चर्य नहीं, गांधी युग के महानतम राजनेता राजाजी और राधाकृष्णन् सुविख्यात दर्शनशास्त्री दोनों ने चीनी साम्यवादी साम्राज्यवादी के खतरे को ध्यान में रखते हुए 1962 में अपनी मन की पीड़ा व्यक्त की है। काश, आज सरदार हमारा नेतृत्व करने के लिए जीवित होते।''[87]

—एन.जी. रंगा

राष्ट्रीय राजधानी में सरदार पटेल का कोई स्मारक नहीं

राष्ट्रीय राजधानी में सरदार पटेल का कोई स्मारक नहीं है। भारत के पहले गृहमंत्री और उपप्रधानमंत्री के तौर पर सरदार पटेल का निवास नई दिल्ली में 1, औरंगजेब रोड पर था। इसी निवास पर सभी प्रमुख लोग उनसे मिलने आते थे। डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी और डॉ. बी.आर. अंबेडकर को जब स्वतंत्र भारत के पहले मंत्रिमंडल में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया गया तो वे इसी आवास पर आए थे। इसी आवास में रहते हुए सरदार पटेल ने भारतीय रियासतों के एकीकरण की समूची प्रक्रिया की योजना बनाई और उसका क्रियान्वयन किया, संक्षेप में कहें, तो यह आवास भारत की राजनीतिक एकता को मूर्त रूप लेने का साक्षी रहा है। सरदार पटेल की बेटी मणिबेन पटेल को याद है कि उस समय दिल्ली में ए.आई.सी.सी. के कार्यालय के लिए कोई इमारत नहीं थी, इसलिए कांग्रेस कार्य समिति की बैठक सरदार के आवास पर ही होती थी। 1, औरंगजेब रोड के मकान के बारे में सरदार ने एक बार लिखा था। ''यह आवास बदलने का मेरा कोई इरादा नहीं है। यह आवास मेरे बहुत अनुकूल है और भावनात्मक के साथ-साथ राजनीतिक कारणों से मुझे इससे लगाव है।''[88] सरदार पटेल का स्मारक न होना यह बताता है कि उनकी विरासत उनके स्वयंभू राजनीतिक उत्तराधिकारी कांग्रेस के हाथ में है, जिसकी अनदेखी और रोक के कारण ऐसा हुआ है!

□

संदर्भ

1. राजमोहन गांधी, पटेल : ए लाइफ, अहमदाबाद : नवजीवन पब्लिसिंग हाउस, 1990, पृष्ठ 6
2. उस्मानिया विश्वविद्यालय में डॉक्टरेट की मानद उपाधि दिए जाने के दीक्षांत समारोह के अवसर पर दिए गए सरदार पटेल के भाषण का उद्धरण। वी. शंकर, माय रेमिनिसेंस ऑफ सरदार पटेल, भाग 2, (दिल्ली मैकमिलन एंड कंपनी, 1975), पृष्ठ 45।
3. इंडियाज रिबर्थ, मैसूर मीरा अदिति सेंटर, तृतीय संस्करण, 2000।
4. ज्ञानवती दरबार, पोर्टेट ऑफ ए प्रेसीडेंट, भाग 2, नई दिल्ली विकास पब्लिशिंग हाउस, 1976, पृष्ठ 59-60।
5. सरदार पटेल को डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी की श्रद्धांजलि, द संडे स्टेट्समैन, 17 दिसंबर, 1950।
6. 'आम बजट—अनुदान माँगें, लोकसभा, 26 जून, 1952' पर बहस में डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी। देखें, संसदीय बहस—भाग II—प्रश्नोत्तर के अतिरिक्त काररवाही—ऑफीशियल रिपोर्ट, पृष्ठ 2573-2574।
7. राजमोहन गांधी, पटेल ए लाइफ, पृष्ठ 417-418।
8. मणिबेन पटेल द्वारा [वरिष्ठ पत्रकार, लेखक और सरदार पटेल के पत्रव्यवहार के संपादक] दुर्गादास को दी गई जानकारी और विचार एवं ट्रेवर ड्रीबर्ग [सरदार पटेल के पत्रव्यवहार में दुर्गादास के संपादन सहयोगी और राजनीतिक समीक्षक तथा फीचर लेखक, पूर्व संपादक, द इंडियन एक्सप्रेस, नई दिल्ली]।
9. दुर्गादास, सरदार पटेल का पत्रव्यवहार 1945-1950, भाग 2, अहमदाबाद, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, 1973, पृष्ठ xxxi.
10. उक्त, पृष्ठ xxxi.
11. मणिबेन पटेल एवं जी.एम. नंदुरकर, संपादित दिस वॉज़ सरदार—द कॉमेमोरेटिव वॉल्यूम, अहमदाबाद : सरदार वल्लभभाई पटेल स्मारक भवन, 1974, पृष्ठ 284-85। वी. शंकर सन् 1946-1950 के बीच सरदार पटेल के सचिव रहे। सरदार ने स्वतंत्रता पूर्व के महत्वपूर्ण वर्षों में शंकर का चयन खासतौर पर किया था। शंकर बाद में केंद्रीय रक्षा सचिव भी बने।
12. सोमनाथ पुनर्निर्माण परियोजना के मुख्य प्रस्तावक और कर्ता के.एम. मुंशी को लिखा गया। के.एम. मुंशी, पिलग्राइमेज टू फ्रीडम, बॉम्बे भारतीय विद्या भवन, 1967 में पृष्ठ 560 में पुनर्प्रकाशित हुआ है।
13. मणिबेन पटेल एंड जी.एम. नंदुरकर, संपादन, सरदार्स लेटर्स—मोस्टली अननोन, भाग 1, अहमदाबाद—सरदार वल्लभभाई पटेल स्मारक भवन, 1980, पृष्ठ 259. संपादकों—मणिबेन पटेल और जी.एम. नंदुरकर द्वारा अनूदित पत्र।
14. जेठालाल जोशी, 'ग्रेट पॉटर', मणिबेन पटेल और जी.एम.नंदुरकर, संपादन, दिस वॉज सरदार-द कॉमेमोरेटिव वॉल्यूम, अहमदाबाद, सरदार वल्लभभाई पटेल स्मारक भवन, 1974, पृष्ठ 195-196।

15. एन.वी.गाडगिल, गवर्नमेंट फ्रॉम इनसाइड, मेरठ, मीनाक्षी प्रकाशन, 1968, पृष्ठ 59–60.
16. उक्त, पृष्ठ 184–185.
17. उक्त, पृष्ठ 185–186.
18. पी. सुंदरय्या (1913–1985), जो कॉमरेड पी.एस. के नाम से भी जाने जाते थे, कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (मार्क्सिसिस्ट) के संस्थापकों में से एक थे और हैदराबाद में कम्युनिस्टों के प्रभाव को बढ़ाने में इनकी बड़ी भूमिका थी।
19. दुर्गादास, संपादन, सरदार पटेल का पत्र–व्यवहार 1945–50, भाग 6, अहमदाबाद, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, 1973, पृष्ठ 27–28।
20. 3 जनवरी, 1948 को कलकत्ता मैदान में पाँच लाख लोगों के सामने सरदार पटेल का भाषण, देखें, पृष्ठ डी. सग्गी संपादित लाइफ एंड वर्क ऑफ सरदार वल्लभभाई पटेल, बंबई ओवरसीज पब्लिशिंग हाउस, [तारीख का उल्लेख नहीं], पृष्ठ 52.
21. इंडिया एंड कम्यूनिज़्म, सरदार पटेल के स्टीफन डेविड के साथ साक्षात्कार का उद्धरण, 2 अक्टूबर 1948, देखें, मणिबेन पटेल और जी.एम.नंदुरकर, संपादन, सरदार पटेल इन टून विथ मिलियन्स–I, अहमदाबाद, सरदार वल्लभभाई पटेल स्मारक भवन, 1975, पृष्ठ 182–183.
22. 'ग्लोबल मैटर्स' पर सभी मुख्यमंत्रियों को सरदार पटेल के लिखे पत्र का अंश, नई दिल्ली, 15 अक्टूबर, 1948, देखें, दुर्गादास, संपादन, सरदार पटेल का पत्र–व्यवहार 1945–50, भाग 6, अहमदाबाद, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, 1973, पृष्ठ 440–41।
23. दुर्गादास, संपादन, सरदार पटेल का पत्र–व्यवहार 1945–1950, भाग 8, अहमदाबाद नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, 1973, पृष्ठ 135।
24. उक्त, पृष्ठ 133।
25. राजमोहन गांधी, पटेल ए लाइफ, पृष्ठ 509।
26. उक्त
27. 'ग्लोबल मैटर्स' पर सभी मुख्यमंत्रियों को सरदार पटेल के लिखे पत्र का अंश, नई दिल्ली, 15 अक्तूबर, 1948, देखें, दुर्गादास, संपादन, सरदार पटेल का पत्र–व्यवहार 1945–50, भाग 6,पृष्ठ, 444–445।
28. वी. शंकर, माय रेमिनिसेंसेज ऑफ सरदार पटेल, भाग 2, दिल्ली, मैकमिलन एंड कंपनी, 1975, पृष्ठ 132।
29. द्वारका प्रसाद मिश्रा (1901–1988), स्वतंत्रता सेनानी, मध्यप्रदेश के दो बार मुख्यमंत्री। मिश्रा स्वतंत्रता के पश्चात् से 1970 के दशक तक भारत की राजनीति में सक्रिय रहे।
30. डी.पी. मिश्रा, द नेहरू एपॉक फ्रॉम डेमोक्रेसी टू मोनोक्रेसी, नई दिल्ली, हर–आनंद पब्लिकेशंस, 2001, पृष्ठ 109–110
31. के.एम. मुंशी, द एंड ऑफ एन इरा, बंबई भारतीय विद्या भवन, (1957), द्वितीय संस्करण, 1990, पृष्ठ 154–155।
32. उक्त, पृष्ठ 164. के.एम. मुंशी का चयन सरदार पटेल ने हैदराबाद में भारत के एजेंट–जनरल के रूप में किया था। उस महत्त्वपूर्ण अवधि में उन्होंने सरदार की आज्ञाओं और इच्छाओं का निकटता से पालन किया।
33. बहस पर रिपोर्ट, 27 अगस्त, 1947, देखें संविधान सभा की बहस, भाग 5।
34. उक्त
35. उक्त
36. अल्पसंख्यक अधिकारों पर रिपोर्ट पर बहस, 28 अगस्त, 1947, देखें, संविधान सभा की बहस, भाग 5।
37. नागरिक संबोधन पर उत्तर का अंश, बंबई, 16 जनवरी 1948, देखें, पी.डी. सग्गी संपादित, लाइफ एंड वर्क ऑफ सरदार वल्लभभाई पटेल, पृष्ठ 66–67।

38. उक्त, पृष्ठ 62।
39. के संतानम, 'हिज नेशनलिज्म' मणिबेन पटेल और जी.एम.नंदुरकर, संपादन, दिस वॉज़ सरदार-द कॉमेमोरेटिव वॉल्यूम, अहमदाबाद सरदार वल्लभभाई पटेल स्मारक भवन, 1974, पृष्ठ 324-325. (के. संतानम (1895-1980), स्वतंत्रता सेनानी, संविधान सभा के सदस्य, 1948 में नेहरू मंत्रिमंडल में रेलवे और परिवहन राज्य मंत्री। संतानम राज्यपाल भी रहे और इंडियन एक्सप्रेस के पहले संपादकों में से एक रहे (1933-1940)। सी.राजगोपालाचारी, के. कामराज के निकट सहयोगी और अनेक पुस्तकों के लेखक संतानम सन् 1962 में भ्रष्टाचार पर गठित राष्ट्रीय समिति के अध्यक्ष बनाए गए थे।
40. पत्र, दिनांक 30 नवंबर, 1949, दुर्गादास, संपादित सरदार पटेल का पत्र-व्यवहार, 1945-1950, भाग 8, अहमदाबाद, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, 1973, पृष्ठ 363-364।
41. उक्त, पृष्ठ 362।
42. दुर्गादास, सरदार पटेल का पत्र-व्यवहार, भाग 8, पृष्ठ 53।
43. डी.पी. मिश्रा, द नेहरू एपॉक फ्रॉम डेमोक्रेसी टू मोनोक्रेसी, पृष्ठ 106।
44. सरदार पटेल का पत्र-व्यवहार, भाग 8, उक्त, पृष्ठ 136।
45. उक्त, पृष्ठ 388-389।
46. उक्त, पृष्ठ 86-87।
47. चीन को लेकर सरदार पटेल के नेहरू को लिखे पत्र के अंश, दिनांक 7 नवंबर, 1950, (U.O. No. 821-UPM/50, अत्यंत व्यक्तिगत) देखें, के.एम. मुंशी, पिलग्राइमेज टू फ्रीडम, पृष्ठ 175-181।
48. वी. शंकर, भाग 2, पृष्ठ 140।
49. फ्रॉम कर्जन टू नेहरू एंड आफ्टर, में दुर्गादास द्वारा दी गई बातचीत (1969), नई दिल्ली, रूपा एंड कंपनी, चतुर्थ इंप्रिंट, 2009, पृष्ठ 305।
50. एन.वी.गाडगिल, गवर्नमेंट फ्रॉम इनसाइड, पृष्ठ 82।
51. उक्त, पृष्ठ 84।
52. दुर्गादास, सरदार पटेल का पत्र-व्यवहार, भाग 7, पृष्ठ 238।
53. जयंतोनाथ चौधरी (1908-1983), ने हैदराबाद काररवाई का संचालन किया, 1948-49 हैदराबाद के सैन्य प्रशासक रहे, 1962 और 1966 के बीच भारतीय सेना के अध्यक्ष रहे। भारतीय सेना के प्रमुख के रूप में जनरल चौधरी ने 1965 में पाकिस्तान पर भारत को शानदार विजय दिलाई।
54. डी.पी. मिश्रा, द नेहरू एपॉक : फ्रॉम डेमोक्रेसी टू मोनोक्रेसी, पृष्ठ 168।
55. के.एम. मुंशी, पिलग्राइमेज टू फ्रीडम, पृष्ठ 170-171।
56. वी.पी. मेनन, द स्टोरी ऑफ द इंटीगिरेशन स्टेट्स, लंदन : लॉन्गमैन्स, ग्रीन एंड कंपनी, 1955, पृष्ठ 246।
57. एन.जी. रंगा, 'सरदार एंड मणिबेन', मणिबेन पटेल और जी.एम. नंदुरकर, संपादन, दिस वॉज सरदार-द कॉमेमोरेटिव वॉल्यूम, अहमदाबाद, सरदार वल्लभभाई पटेल स्मारक भवन, 1974, पृष्ठ 421-422
58. वी. शंकर, भाग 2, पृष्ठ 37
59. उक्त, पृष्ठ 38।
60. उक्त, पृष्ठ 47।
61. के.एम. मुंशी, पिलग्राइमेज टू फ्रीडम, पृष्ठ 175।
62. लाइफ एंड वर्क ऑफ सरदार वल्लभभाई पटेल, पृष्ठ 54।

63. दुर्गादास, संपादन, सरदार पटेल का पत्र-व्यवहार 1945-50, भाग 6, अहमदाबाद, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, 1973, पृष्ठ 387।
64. मणिबेन पटेल और जी.एम. नंदुरकर, संपादन, सरदार पटेल इन टून विथ मिलियन्स-I, अहमदाबाद, सरदार वल्लभभाई पटेल स्मारक भवन, 1975, पृष्ठ 49।
65. उक्त।
66. राजमोहन गांधी, पृष्ठ 448-449।
67. दुर्गादास, इंडिया फ्रॉम कर्जन टू नेहरू एंड आफ्टर, (1969), नई दिल्ली, रूपा एंड कंपनी, चतुर्थ इंप्रिंट, 2009, पृष्ठ 272।
68. वी. शंकर, भाग 2, पृष्ठ 61-62।
69. उक्त, पृष्ठ 63।
70. एच.वी. कामथ, 'हिज वेरीगेटिड रोल इन द कांस्टीट्यूएंट एसेंबली', मणिबेन पटेल और जी.एम.नंदुरकर, संपादन, दिस वॉज सरदार-द कॉमेमोरेटिव वॉल्यूम अहमदाबाद, सरदार वल्लभभाई पटेल स्मारक भवन, 1974, पृष्ठ 335।
71. एन.वी. गाडगिल, गवर्नमेंट फ्रॉम इनसाइड, पृष्ठ 86।
72. वी. शंकर, माय रेमिनिसेंसेज ऑफ सरदार पटेल, भाग-1, दिल्ली मैकमिलन एंड कंपनी, 1975, पृष्ठ 158।
73. राजमोहन गांधी, राजाजी : ए लाइफ, नई दिल्ली : पेंग्विन, 1997, पृष्ठ 320।
74. सरदार पटेल का महात्मा गांधी को लिखा पत्र, जिसमें उन्होंने दायित्वों से मुक्त करने का आग्रह किया था। देखें, सरदार पटेल का पत्र-व्यवहार, भाग-6, पृष्ठ 25।
75. उक्त, पृष्ठ 17।
76. उक्त, पृष्ठ 21-22।
77. वी. शंकर, भाग 2, पृष्ठ 91-92।
78. उक्त, पृष्ठ 141।
79. उक्त, पृष्ठ 146।
80. वी. शंकर, भाग 1, पृष्ठ 156।
81. के.एम. मुंशी, पिलग्राइमेज टू फ्रीडम, पृष्ठ 290-291।
82. वी. शंकर, भाग 2, पृष्ठ 149।
83. मणिबेन पटेल और जी.एम.नंदुरकर, संपादन, सरदार पटेल इन टून विथ मिलियन्स-I, अहमदाबाद, सरदार वल्लभभाई पटेल स्मारक भवन, 1975, पृष्ठ 27। मणिबेन पटेल और जी.एम. नंदुरकर का नोट 'बिहार का शीरा घोटाला जिसने बिहार विधानसभा को हिला दिया था तथा जनता के विश्वास को डिगा दिया था। बिहार मंत्रालय ने शीरा फैक्टरियों को सिफारिशी पत्र जारी किए थे कि वे इन पत्रधारकों को आवंटित कोटे में से 10 प्रतिशत में से उत्तर बिहार में चार आने प्रति ढेली के भाव से और दक्षिण बिहार में आठ आना प्रति ढेली के भाव से दिया जाए। इस प्रकार परमिट धारकों को 4 से 10 रुपए प्रति ढेली मिले। लोगों ने इसे एक तरह की कालाबाजारी माना। कांग्रेस संसदीय बोर्ड के सचिव श्री शंकर राव ने इस मामले की जाँच पर लिखा, 'इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि कांग्रेस और कांग्रेसियों ने लोगों की निगाह में सारी प्रतिष्ठा खो दी है, जो कांग्रेसियों को आम कालाबाजारी मानने लगे हैं। चंद कांग्रेसियों के इस आचरण ने कांग्रेस का नाम मिट्टी में मिला दिया है और बिहार में कांग्रेस इस झटके से कभी नहीं उबर पाई।' (उक्त, पृष्ठ 27)
84. सरदार पटेल और वी. शंकर के बीच अंतिम बातचीत का अंश, देखें, वी. शंकर, भाग 2, पृष्ठ 147।
85. वी.पी. मेनन, 'इफ सरदार वेयर अलाइव टूडे', दिस वॉज सरदार-द कॉमेमोरेटिव वॉल्यूम, अहमदाबाद, सरदार वल्लभभाई

पटेल स्मारक भवन, 1974, पृष्ठ 426-427।

86. उक्त, पृष्ठ 135-136।

87. एन.जी. रंगा, 'सरदार ऐंड मणिबेन'—मणिबेन पटेल तथा जी.एम. नंदुरकर द्वारा संपादित; 'दिस वाज सरदार'—द कोमेमोरेटिव वॉल्यूम, अहमदाबाद : सरदार वल्लभभाई पटेल स्मारक भवन, 1974, पृ. 421

88. सरदार पटेल के एन.वी. गाडगिल को लिखा पत्र, 21 जून, 1948, देखें, दुर्गादास, सरदार पटेल का पत्र-व्यवहार, भाग 7, पृष्ठ 218।

□□□

सरदार पटेल आधुनिक भारत के निर्माता थे। विपरीत तथा दुर्गम परिस्थितियों से जूझते हुए उन्होंने भारत की एकता और अखंडता को सुनिश्चित किया; और आज हम इस एकता का जयघोष कर रहे हैं, तो यह केवल सरदार पटेल के प्रयत्नों का ही फल है। पर यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि देश में ऐसी अनेक शक्तियाँ हैं, जो इस एकता-अखंडता से भयभीत हैं। उन्होंने बंदूकों और बमों से लोगों को डरा-धमकाकर गुमराह किया है। महात्मा बुद्ध, महात्मा गांधी और सरदार पटेल की इस पावन भूमि से इन लोगों को कड़े शब्दों में यह संदेश देना होगा कि उनके हिंसक तरीके कामयाब नहीं होंगे। उन्हें अपना मार्ग बदलना होगा और देश की मुख्यधारा में शामिल होकर राष्ट्र के उत्थान और उन्नयन के लिए कार्य करना होगा, ताकि सरदार पटेल जैसे भारत माँ के सपूतों के स्वप्न साकार हो सकें।

—नरेंद्र मोदी